मास्टर ऑफ सोशल वर्क
(M.S.W.)
अन्तिम वर्ष

श्रम कल्याण एवं अधिनियम
(Labour Welfare & Legislation)
(चतुर्थ प्रश्न पत्र)

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट (सतना) म.प्र. - ४८५३३४

श्रम कल्याण एवं अधिनियम
(Labour Welfare & Legislation)

ई–संस्करण 2023–24 / M.S.W. –II - 10

प्रेरणा एवं मार्गदर्शन :
प्रो. भरत मिश्र
कुलपति
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

पाठ्यक्रम निर्माण

डॉ. अजय आर. चौरे, म0ग0चि0ग्रा0 विश्वविद्यालय चित्रकूट

पाठ्यक्रम संयोजक

डॉ. अजय आर. चौरे,

पाठ्यक्रम अभिकल्पना एवं सम्पादक मण्डल :

डॉ. कमलेश थापक डॉ. विनोद शंकर सिंह

डॉ. नीलम चौरे डॉ. राजेश त्रिपाठी

मुद्रण प्रस्तुति

डॉ. सन्तोष अरसिया, उपकुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

सन्तोष राजपूत, सहायक कुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

शिवांगी त्रिपाठी

सम्पर्क सूत्र :
डॉ. कमलेश थापक, निदेशक, दूरवर्ती शिक्षा
दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

दूरभाष– 07670–265460, E-mail – directordistancemgcgv@gmail.com, website : www.mgcgvchitrakoot.com

प्रकाशक :
दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

प्राक्कथन...

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की तपोस्थली, मंदाकिनी नदी के सुरम्य तट पर स्थापित महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय भारतरत्न नानाजी देशमुख के शैक्षिक चिंतन और संकल्पों की जीवंत अभिव्यक्ति है, जो म.प्र.शासन द्वारा 12 फरवरी, 1991 को विशेष अधिनियम 09, 1991 द्वारा स्थापित हुआ।

विश्वविद्यालय का ध्येय वाक्य है–'विश्वं ग्रामे प्रतिष्ठितम्' अर्थात ग्राम विश्व का लघु रूप है। विश्वविद्यालय चित्रकूट में स्थित है, जो एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है। नई पीढ़ी के लिये यह स्थान आदर्श एवं प्रेरणा का केन्द्र है।

विश्वविद्यालय में कृषि, प्रबंधन, अभियांत्रिकी, लोक विज्ञान, ग्रामीण विकास एवं स्थानीय स्वशासन, लोक शिक्षा, कला, संस्कृति एवं साहित्य सहित सभी अकादमिक धारायें प्रभावी रूप में उपस्थित हैं। विश्वविद्यालय, ग्राम को समाज जीवन की मूल इकाई मानकर शिक्षण, प्रशिक्षण, शोध और प्रसार कार्यों से सर्वांगीण विकास के लिए विगत 3 दशकों से अधिक समय से समर्पित प्रयास कर ग्रामोदय से राष्ट्रोदय के संकल्प में लगा हुआ है। विश्वविद्यालय ने अपनी गतिविधियों और कार्यक्रमों के माध्यम से कौशल विकास के उन्नयन एवं प्रमाणन तथा सतत विकास लक्ष्यों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है तथा शासन के सहयोगी के रूप में उल्लेखनीय भूमिका का निर्वहन कर रहा है।

प्राचीन एवं सनातन भारतीय ज्ञान की परम्परा के आलोक में आई, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 चिरवांछित जन आकांक्षाओं की सम्यक् अभिव्यक्ति है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के युगान्तरकारी प्रावधानों को लागू करने में मध्यप्रदेश अग्रणी राज्य रहा है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने नवाचारों के लिए सकारात्मक और अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराया है। विद्यार्थियों की पठन–पाठन की स्वतंत्रता, कौशल विकास के समुचित अवसर तथा राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुसार आने वाले भविष्य के लिए तैयार करने की प्रतिबद्धता राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों में स्पष्टतः दिखाई देती है।

विश्वविद्यालय ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों को दूरवर्ती के विभिन्न पाठ्यक्रमों में अर्थपूर्ण रूप से जोड़कर इन्हें सत्र 2023–24 से पुनः संशोधित/परिवर्धित रूप में प्रारम्भ किया है। विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा के प्रसार एवं रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु दूरवर्ती माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष प्रयास कर रहा है। दूरवर्ती पद्धति से संचालित विभिन्न पाठ्यक्रमों में नियमित संपर्क कक्षाओं के आयोजन, उच्च शिक्षा की स्व–अध्ययन सामग्री एवं नई शैक्षिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए शिक्षार्थी को बेहतर शैक्षणिक अनुभव प्रदान करने की व्यवस्था सुनिश्चत की जा रही है।

विश्वविद्यालय के दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र द्वारा सत्र 2024–25 में संचालित परास्नातक, स्नातक तथा डिप्लोमा स्तरीय दूरवर्ती पाठ्यक्रमों के शिक्षार्थियों हेतु ई–स्वनिर्देशित अध्ययन सामग्री प्रस्तुत करते हुये मुझे हर्ष का अनुभव हो रहा है।

पाठ्यक्रम से जुडे सभी शिक्षार्थियों, अभिभावकों, प्रशासकों, समन्वयकों और अन्य सभी को मेरी मंगलकामनायें

प्रो. भरत मिश्रा
कुलपति

श्रम कल्याण एवं अधिनियम
(Labour Welfare & Legislation)

इकाई – 1 : भारत में आधुनियम उद्योगो का अभ्युदय एवं विकास

इकाई – 2 : औद्योगीकरण का आधुनिक युग

इकाई – 3 : सामाजिक सुरक्षा का उद्‌गम

इकाई – 4 : राज्य बीमा संशोधित अधिनियम

इकाई – 5 : श्रम कल्याण

इकाई–1

भारत में अधिनियम उद्योगों का अभ्युदय एवं विकास

भारत उद्योगों का अतीत अत्यन्त गौरवपूर्ण रहा है। इतिहास में इस बात के अनेक प्रमाण मिलतें है। निसे सिद्ध होता है। कि भारत में उत्तम कोटि के अनेक कलात्मक वस्तुओं के वस्त्रों का निर्यात विदेशो को होता था हीरोडोटस तथा मैगस्थनीज नामक यूनानी लेखको में बने उत्कृष्ठ सूती वस्त्रों एवं रत्नजडित स्वर्ण आभूषणों की प्रंशसा की है। एडवर्ड थार्नटन नामे एक अंग्रेज इतिहास वेदत्ता ने लिखा है। जिस समय नील की घाटी में पिरामिडों का आस्तिव भीी नही था जब आधुनिक सभ्यता के केन्द्र यूनान और रोम झंगली अवस्था में थें उस समय भी भारत वर्ष वैभव एवं संपन्नता का केन्द्र बना हुआ था भारत में बने महान सूती वस्त्रों के संदर्भ में वस्त्र ही नहीं अन्य प्रकार की वस्तुएं यहां के शिल्पियों द्वारा बनायीी जाती थी जैसे लोहे और इस्पात के औजार एवं अस्त्र–शस्त्र रत्नजटितः आभूषण वस्त्रों की छपाई कढ़ाई कॉच अथवा बिल्लौर का सामान हाथी दांत एवं चन्दन की कलात्मक वस्तुएं संगमरमर की सुंदर मूर्तियों चमडे का समान कागज का उत्पाादन इस आदि राजाओं और नवाबों की राजणानियों में इस प्रकार की शिल्प कलाओं के लिए उचित वातावरण था और शिल्पकारों का शासकों की भॉति संचालित किये जाते थें सामान्य उपकरण की सहायता से ही शिल्पकार हाथ से काम करके इतनी उत्कृष्ठ वस्तुओं का उत्पादन करते थें।

भारत में आधुनिक उद्योगों का उदय

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य ब्रिटिश शासन की जडे भारत में पूरी तरह जम गई श्रीयुत रानाडे के अनुसार भारत की औद्योगिक स्थिति पिछली शताब्दी की आठवी शताब्दी के मध्य अधपतन को पहुच चुकी थी किन्तु इससे पहले ही भारत में आधुनिक उद्योगों की स्थापना हो चुकी थी सन् 1833 में भारत के साथ व्यापार करने का ईस्ट इण्डिया कम्पनी का एकाधिकार समाप्त कर दिया गसा सन 1852 के बाद रेलो के विकास तथा कोयले की उपलब्धि ने भी मशीनीकृत कारखानों की स्थापना को प्रोत्साहन किया इन उद्योगों में दो प्रकार के उद्योग में ब्रिटिश पूंजी तथा तकनीकी का ही अधिकांशतः प्रयोग किया गया इन उद्योगों ममें दो प्रकार के उद्योग थें प्रथम बागान उद्योग तथा द्वितीय निर्माण उद्योग।

- इन उद्योगों में नील चाय तथा कहता उद्योग प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।
- **नील उद्योगः**– अनेक ब्रिटिश नागरिको ने अपनी पूंजी नील उद्योग के विकास में लगायी तथा विहार और बंगाल में अनेक नील की कोठियों स्थापित हो गयी ये उद्योगपती किसानों को नील के पौधे की खेती के लिए ऋण देतें थें यह उद्योग उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से लेकर बीसवीं शताब्दी के प्रांरभ तक चलता रहा। इसके बाद जर्मनी में कोयले से कृत्रिम रंग बनाया जाने लगा जो नील से सस्ता होता था अतः: नील की खेती एवं नील उद्योग दोनो ही समाप्त हो गये।
- **चाय उद्योगः**– उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में ईस्ट इण्डिया कंपनी के समय में ही चीन से चाय के कुछ पौधे मंगवाकर उन्हें भारतीय चाय के पौधे के साथ कलम करके एक ऐसा नया पौधा विकसित किया गया जिसमें पत्तियों एवं सुगंध की

प्रचुरता थी जो चीन द्वारा पूरी की जाती थी चाय की खेती में काम करने के लिये असम में पर्याप्त संख्या में मजदूर उपलब्ध नही थें सन् 1860 के बाद इस उद्योग में कुछ मंदी आयी जो लगभग 8 वर्ष तक रही इसके बाद इसका निरंतर विकास होता रहा ब्रिटेन के बाजारो में भारतीय चाय का सिक्का जमने लगा और चीन से धीरे–धीरे चाय का आयात कम होकर भारत तथा श्रीलंका की चाय का अधिकाधिक आयात ब्रिटेन में चाय के आयातों में भारतीय चाय का आयात 4 प्रतिशत था जो सन् 1903 तक बढ़कर लगभग 60 प्रतिशत हो गया। 1960 के बाद प्रथम युद्ध तक इस उद्योग की पर्याप्त प्रगति हुई प्रामि विश्वयुद्ध के बाद तो अन्य देशो को भी भारतीय चाय का निर्यात होने लगा।

- **कहवा उद्योगः**– भारत में कहवे का पौधा सर्वप्रथम 17वीं शताब्दी में मूल व्यापारियों द्वारा लाया गया था इसकी खेती दक्षिण भारत के कुछ भागों में होन लगी थी 1860 के बाद इस उद्योग का तीव्रता के साथ विकास होने लगा सन् 1860 से 1879 तक भारत से कहवे के निर्यात में 10 गुनी वृद्धि हो गई किन्तु इसके बाद दक्षिण भारत तथा श्रीलंका के कहवा बागानों में इस पौधे में एक कीड़ा लग जाने के कारण इसकी उपज में कमी हो गयी यह स्थिति 1876 से 1888 तक रही इसके बाद भारतीय कहवे की मांग तेजी से बढ़ी क्योंकि कहवे का प्रधान उत्पादन देश ब्राजील राजनीतिक उथल–पुथल के कारण पर्याप्त कहवे की पूर्ति करने में असमर्थ था अतः: भारत को काफी के निर्यात से पर्याप्त में लगभग दो लाख एकड भूमि पर काफी या कहवे की खेती की जाती थी।
- **निर्माण उद्योग** :– सूती वस्त्र उद्योग तथा जूट उद्योग कलकत्ता के आस–पास विकसित हुआ सन् 1884 में विशाल स्तर पर मशीनीकृत हुआ सन् 1884 में विशाल स्तर पर मशीनीकृत कारखानों की स्थापना हुई उसी सन में एक ओर कलकत्ता में एक विदेशी उद्योगपती द्वारा जूट मिल की स्थापना की गयी और दूसरी ओर बम्बई में एक पारसी सज्जन द्वारा सूत मिल की स्थापना की गयी इन दोनो उद्योगों के अतिरिक्त भी कुछ और उद्योगों की स्थापना की गयी इसमें कागज कोयला खनिज उद्योग तथा चमड़ा उद्योग प्रमुख थे। सन् 1900 तक जूट मिलों की संख्या उद्योग तथा चमड़ा उद्योग प्रमुख थे जिनमें 1600 करघें लगे हुये थे 19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में भारत में अनेक दुंभिशुपडें कानपुर में चमडे का कारखाना मद्रास में चमडा रंगने के कारखाने तथा देशों के अन्य स्थानो पर दियासलाई कांच कागज साबुन बनने के कारखाने की स्थापना की गयी सन् 1911 की जनगणना के अनुसार उस समय ऐसे कारखानों की संख्या जिनमें 20 या अधिक श्रमिक काम करते थें। कुछ मिलाकर इन कारखानों में 20 लाख श्रमिकों को रोजगार मिला हुआ था, 7 लाख चाय व कहवा बागानो में 3 लाख सूती वस्त्र मिलो में 2 लाख जूट मिलो में लाख कोयला खानों में तथा शेष अन्य उद्योगो में प्रथम विश्वयुद्ध प्रारम्भ होने तक देश में जूट कागज सीमेंट चमडा कांच कोयला माचिस लोहा एवं इस्पात उद्योगों का विकास हो चुका था आधुनिक उद्योगो की स्थापना में प्रेरक तब ब्रिटिश सत्ता यह नही चाहती थी भारत में उद्योगो का विकास हो उसकी तो नीति ही यही थी कि औद्योगिक उत्पादनो के लिए भारत ब्रिटेन पर निर्भर रहे इसकी पृष्ठभूमि में जो प्रेरक तत्व थे उनकी विवेचना नीचे की गयी है।
- **रेल एवं सडक यातायात का विकास** :– यह पहले ही कहा जा चुका है कि रेल एवं सडक यातायात के विकास में देश के भीतरी भागों को बंदरगाहो से जोड़ दिय

अब कच्चा माल खनिज पदार्थ कोयला आदि को औद्योगिक केन्द्र तक ले जाना सम्भव हो गया।

- **देश में राष्ट्रीयभावना का विकास** :– गांवों की आत्मनिर्भरता की समाप्ति ग्रामीण उद्योग धन्धो के विनाश के कारण भारी संख्या में श्रमिकों का औद्योगिक केन्द्रो की ओर प्रवास एवं वस्तुओं को अदल बदल के स्थान पर मुद्रा पर आधारित विनिमय प्रणाली ने देश की अर्थव्यवस्था को एक सूत्र में बांधने का अवसर दिया चाय बागानों लाखों लोगों को दूसरे क्षेत्र में जाकर काम करने का मौका मिला इससे राष्ट्रीय कांग्रेस का गठन किया गया और धीरे–धीरे स्वदेशी आंदोलन जोर पकडता गया राष्ट्र के औद्योगिक विकास के लिए मांग उठाई जाने लगी।
- **अन्य देशो में राजनीतिक घटनात्मक** :– विदेशो से राजनीतिक विप्लवों एवं ग्रहयुद्धो ने भारतीय कपास एवं जूट के व्यापार को पनपने का अच्छा अवसर दिया व्यापारियों एवं उपयोग सूती वस्त्र मिलो आदि की स्थापना में किया गया।
- **यातायात के साधनो का विकास** :– सन् 1850 के बाद देश में रेलवे वाहनो एवं सडको की लम्बाई क्रमशः बढ़ती गयी इससे देश के भीतरी क्षेत्रों का बंदरगाहो से सम्बन्ध स्थापित हो गया अतः स्थानीय कच्चे माल एवं सस्ते श्रम का लाभ उठाने के लिए इन क्षेत्रों में भी कारखाने खोले जाने लगे।
- **ईस्ट इण्डिया कंपनी के एकाधिकार की समाप्ति** :– भारत के साथ व्यापार करने का एकाधिकार इस कंपनी को मिला था जिससे युरोप के अन्य देशो के लिए द्वार बन्द थे यह एकाधिकार सन् 1833 में समाप्त कर दिया गया। इससे ब्रिटेन की अन्य कंपनियों ने अपनी एजेन्सियों यहाँ खोल दी इंग्लैण्ड के निजी साहसी एवं पूँजीपती भी यहाँ आकर उद्योगो में अपनी पूँजी लगाने लगे।
- **ब्रिटिश पूँजी एवं तकनीकी ज्ञान** :– चाय कहवा नील जूट कोयला रेल यातायात बैंको तथा बीमा और जहाजी कम्पनियों में ब्रिटिश पूँजी के विनियोग तथा उन्नत उत्पादन तकनीक का लाभ देशो को प्राप्त हुआ उन सुविधाओं ने धीरे–धीरे अन्य उद्योगो के विकास के लिए मार्ग प्रशस्त कर दिया।
- **सस्ते श्रम की उपलब्धि** :– भारत में स्थानीय कच्चे माल की सुविधा के अतिरिक्त श्रम लागते कम थी जिसका लाभ उठाने के लिए प्रारंभ में विदेशी पूंजी एवं साहस के बल पर उद्योगो की स्थापना की गयी और फिर धीरे–धीरे भारत के सम्पन्न साहसियां ने भी उद्योग में योग देना प्रारंभ कर दिया।
- **व्यापारिक केन्द्रो का विकास** :– स्थानीय सुविधाओं का लाभ उठाने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में व्यापारिक एवं औद्योगिक केन्द्रो का विकास होता गया और वे रेलों तथा सडकों से सम्बन्ध कर दिये इन केन्द्रो में उद्योगो के विकास के लिए अन्य सुविधायें भी स्वतः ही आर्कषित होती गई इन दशाओं में इन्ही केन्द्रों के आस–पास और अधिक संख्या में कारखानो की संख्या को प्रोत्साहित किया।
- **स्वेज नहर का निर्माण** :– इस नहर के निर्माण ने भारत को यूरोपीय देशों के और समीप ला दिया अब जहाजो को अफ्रीका का चक्कर लगाकर युरोप जाने की आवश्यकता नही रह गयी इससे यातायात व्ययों एवं समय में बचत होने लगी तथा आयात निर्यात दोनो को प्रोत्साहन मिला।
- **छोनो विश्वयुद्धो के मध्य भारत का औद्योगिक विकास** :– प्रथम विश्वयुद्ध की अवधि में भारतीय उद्योग– प्रथम विश्वयुद्ध प्रारंभ होने पर यह अनुभव किया गया कि भारत में उद्योगों का विकास किया जाना आवश्यक है। युद्ध के कारण जहाजी

सुविधाओं की कमी हो गयी एवं आवश्यक वस्तु के आयात एवं निर्यात में बाधाएं आयी ब्रिटिश नीति में भी कुछ परिवर्तन हुआ संकटकालीन स्थिति को देखतें हुए आखिर शासकों की दमन एवं शोषण की नीति में कुछ नरमी आयी और भारत के औद्योगिक करण की समस्या की किचित उदाहरण से सोचा जाने लगा भारतीय औद्योगिक विकास के असन्तुलन के खतरे अब सामने आ गये तथा मशीनो उपकरणों सामाजिक पदार्थो तथा इन्जीनियरिंग के उत्पादनो के लिए भारत की विदेशो पर निर्भरता अब अखरने लगी अतः भारत की विदेशी पर निर्भरता अब अखरने लगी अतः भारत में अन्य सभी प्रकार के उद्योगो के विकास की नीति पर जोर दिया जाने लगा युद्धकाल में सूती वस्त्र उद्योग एवं जूट उद्योग ने बहुत अधिक लाभ उठाया इन मिलो ने एक से अधिक पारियों में काम करके सैनिक मांग की पूर्ति की कोयला उद्योग तथा लोहे एवं इस्पात उद्योग ने भी इस काल में अच्छा लाभ अर्जित किया अनेक नये उद्योगो की स्थापना देश में इस अवधि में हुई इनमें चमड़ा इन्जीनियरिंग साबुन तेल, कागज, कांच, सीमेन्ट, रंग, रोगन आदि प्रमुख थे, खनिज उद्योग में कोयले के अतिरिक्त अभ्रक तथा मैगनीज का उत्पादन बढ़ा सूती कपडे के कारखानों में करघों तथा मजदूरों की संख्या में लगभग पचास प्रतिशत की वृद्धि हो गयी जूट मिलो की संख्या जो कि युद्ध से पहले 64 थी युद्ध के बाद 76 हो गयी तथा इन मिलो में युद्धकाल में लगभग 3000 नये करघें और अस्सी गुनी से भी अधिक वृद्धि इन चार वर्षो की अवधि में हुई कुछ मिलाकर पाँच सौ नये युद्ध काल में खोले गये तथा दोष में नियोजित औद्योगिक श्रमिकों की संख्या में लगभग दो लाख श्रमिकों की वृद्धि इस काल में हुई।

- **शाही औद्योगिक आयोग** :– युद्ध काल में उद्योगपतियों एवं व्यापारी वर्ग को सम्पन्न होने का अच्छा मौका मिला यें अपनी पूंजी को नये उद्योगों में लगाने के अवसर ढढूने लगे ब्रिटिश सरकार पर चारो ओर से भारत के औद्योगिकीकरण का बढाने के लिए दवाब पडने लगे अन्त सन् 1961 में सर टॉमस हालैण्ड की अध्यक्षता में शाही औद्योगिक उद्योग की नियुक्ति की गयी जिसका उद्देश्य भारतीय उद्योग पर और व्यापार में बढ़ाने में भारतीय पूँजी के विनियोग की सम्भावनाओं पर विचार करना तथा इसके उपायों एवं साधना के विषय में सुझाव देना था जिससे कि उद्योगो के विकास में राज्य को सहायता प्रदान करने में सुविधा हो आयोग ने अपनी रिर्पोट सन 1918 मे दी जिसमे भारत के औद्योगिक विकास के लिए सरकार द्वारा प्रत्यक्ष एवं सक्रिय सहयता प्रदान किये जाने का सुझाव दिया गया आयोग ने औद्योगिक विकास के लिए सरकार द्वारा प्रत्यक्ष एवं सक्रिय सहायता प्रदान किये जाने का सुझाव दिया गया आयोग ने औधोगिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण की सुविधाओं के विकास प्राप्तो के औद्योगिक और प्राविधिक सेवाओ के गठन और प्रान्तो के औद्योगिक विभागो की स्थापना की भी सिफारिश थी।

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद की अवधि– यह काल प्रारंभ में अस्थायी प्रगति और बाद में मन्दी का काल रहा सन 1919 से मोण्टफोर्ड सुधारो के अन्तर्गत उद्योगो की प्रांतीय विषयों की सूची में सम्मिलित कर दिया गया इस प्रकार उद्योगो के विकास का दायिव्व प्रांतीय सरकारो के ऊपर आ गया प्रान्तो के साधन सीमित होने के कारण एवं संपूर्ण देश के लिए एक संगठित तथा समन्वित औद्योगिक नीति के अभाव में औद्योगिक करण की नीति को बढाना सम्भव नही था।

संरक्षण की नीति– सन 1921 मे भारत सरकार द्वारा प्रशुल्क आयोग की नियुक्ति की गयी इसने अपनी रिर्पोट सन 1932 में दी जिसमे विवेचनात्मक संरक्षण दियें जाने का सुझाव दिया गया इस नीति के अन्तर्गत सन 124 से सन 1934 तक उद्योगो को विदेश प्रतियोगिता से बचाने के लिए संरक्षण प्रदान किया गया सर्वप्रथम लोहा एवं इस्पात उद्योग को सन 1924 मे संरक्षण दिया गया। उसके बाद सन 1926 में सूती वस्त्रउद्योग सन 1931 में भारी रासायनिक उद्योग सन 1932 में चीनी मिल उद्योगो तथा सन 1934 में कृत्रिम रेशम उद्योग को संरक्षण प्रदान किया गया संरक्षण प्राप्त करने वाले उद्योगो में कागज और दियासलाई उद्योग भी थे।

द्वितीय विश्वयुद्व एवं औद्योगिक विकास– यह काल भारत में औद्योगिक प्रगति के लिए अनुकूल सिद्व हुआ सन 1939 में द्वितीय विश्वयुद्व प्रारंभ होतें ही यूरोपीय देशो से आयात कम हो गये जिससे हमारे उद्योगो को प्रतियोगिता का कोई भय न रहा भारतीय उद्योग जो मंदी के कारण संरक्षण के बल पर चल रहें थे अब अपने पैरो पर खडे होने लगे जिन उद्योगो की मन्दीकाल मे संरक्षण न मिल सका उन्हे भी प्रगति का यह स्वर्णिमा अवसर प्राप्त हुआ परिस्थितियों की उत्पत्ति दो कारणो से हुई।

युद्ध के कारण विदेशों से माल आयात करना कठिन हो गया यातायात की कठिनाइयो उत्पादन देशो के पास अतिरिक्त माल की कमी शत्रु देशो मे आयात पर प्रतिबन्धो के कारण देश में ही शीघ्रता से उत्पादन इकाइयो की स्थापना करके विभिन्न प्रकार की वस्तुओं की कमी दूर करने के प्रयास किये गयें।

मित्र राष्ट्रों ने युद्ध की आवश्यकताएं की पूर्ति के लिए भारत को एक प्रमुख केन्द्र बना लिया विभिन्न प्रकार का सैनिक महत्व का सामान देश में बनाया जाने लगा इससे स्थानीय पूँजी एवं साहस को बल मिला।

युद्धकाल में हुए औद्योगिक विकास की उपलब्धियां–

नियति में वृद्धि युद्वकाल में कारखानो में निमित वस्तुओं के निर्यात में पर्याप्त वृद्धि हुई सैनिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए यहॉ से सूती वस्त्र जूट चमडे के सामान चीनी आदि का निर्यात किया गया इस काल मे औद्योगिक वस्तुओं का निर्यात लगभग दोगुना हो गया।

तकनीकी विकास मे अनुसन्धान– इस काल मे अनेक विदेशी कंपनियों ने अपने कारखाने भारत मे खोले इनमें अनेक विदेशी कारखानो भारतीय साहस एवं पूँजी के आधार पर खोले गयें कागज सीमेण्ट एवं इस्पाल उद्योगो मे वृद्धि 50 प्रतिशत या इससे अधिक थी सूती वस्त्र जूट तथा चीनी उद्योग में वृद्धि 20 या इससे कम थी।

नये उद्योगो की स्थापना– युद्ध काल में ऐसे नये उद्योग स्थापित किए गयें जिनके कारण बाहर से उन वस्तुओं के आयात की आवश्यकता नही रह गयी जैसे बिजली के पंखे सिलाई की मशीने बाइसिविल विजली का सामान डीजल इंजन आदि।

औद्योगिक असंतुलन मे कमी– धातु शोधन भारी रसायानिक मशीने औजार इजीनियरिंग विद्युत उपकरण आदि उद्योगो के विकास ने हमारे औधौगिक असंतुलन में कुछ कमी की तथा देश आधारभूत उद्योगो की और अग्रसर हुआ।

देश के उद्योगो पर विभाजन का प्रभाव– सदियों की परतन्त्रता के बाद भारत को 15 अगस्त रान 1947 को प्राप्त हुई किंतु देश दो भागो में विभाजित हो गया इस विभाजन के अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं दूरगामी राजनीतिक सामाजिक एवं आर्थिक परिणाम हुए जहाँ तक उद्योगो का प्रश्न है विभाजन के प्रभाव निम्नलिखित थे–

खनिज सम्पदा का वित्तरण– लगभग सभी महत्वपूर्ण खनिजों के भण्डार भारत के हिस्से में आए जैसे खनिज लोहा मैंगनीज अभ्रक बॉक्साइट कोयला आदि खनिज उत्पादको का 97 प्रतिशत भाग भारत को मिला पाकिस्तान को मिलने वाले खनिजो मे साधारण महत्व के खनिज थे जैसे जिप्सम चूने का पत्थर नमक आदि।

बजार क्षेत्र में कमी– विभाजन के कारण जो क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये उन क्षेत्रो मे अविभाजित भारत के औद्योगिक उत्पादकों की पर्याप्त मार्ग थी इन बाजार क्षेत्रो की हानि की पूर्ति के लिए भारत को अन्य पडौसी देशो से नये बाजारों की खोज करनी पड़ी।

कच्चे माल की कमी– यद्वपि कारखाने की संख्या और श्रमिको की संख्या का अधिकांश प्रतिशत भारत के हिस्से में आया किंतु अनेक कृषि अन्य कच्चे माल की उपज के पर्याप्त क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये कपास एवं जूट की कमी की समस्या का सामना भारत के सूती वस्त्र तथा जूट उद्योगो।

कुशल कारीगरो की क्षति– विभाजन के फलस्वरूप अनेक मुस्लिम परिवार भारत छोड़कर पाकिस्तान में जा बसे इनके अधिकांश सदस्य कुशल शिल्पी एवं श्रमिक थें इनके स्थानान्तरण से जिन उद्योगो की हानि हुई वे थें जूता उद्योग कढाई चूडी एवं कॉच उद्योग बर्तन उद्योग अदि।

परिवहन सम्बंधी बाधाएं– युद्वकालीन जर्जरित रेल व्यवस्था पर विभाजन के कारण और दबदवा पडा आबादी की अदला का भार रेलवे प्रणाली पर पड़ा कोयले की वैसे ही अनेक क्षेत्रो मे कमी थी क्योकि कोयला क्षेत्रों से कोयला होने की समूचित व्यवस्था नही थी फलतः औद्योगिक उत्पादन में गिरावट आयी।

साहस उद्यम एवं प्रबंन्ध कुशालता– इस दृष्टि से भारत की स्थिति अपेक्षा कृत पर्याप्त उत्तम रही इससे क्रमशः कलकत्ता एवं बम्बई बंदरगाहो पर अतःयधिक भार बढ गया जिसकी कमी कालातंर में हल्दिया तथा कांदला बंदरगाहो के निर्माण से पूरी हुई।

करांची और ढाका बंदरगाहो का अभाव– पूरब मे ढाका तथा पश्चिम मे करांची बंदरगाहो भारत के अधिकार क्षेत्र में रहें इसके अतिरिक्त पाकिस्तान से अनेक हिंदु उद्यमकर्ता एवं पूँजीपती भारत में आकर बस गये।

पूँजी बाजार पर प्रतिकूल प्रभाव– विभाजन के बाद हुई असधारण उथल पुथल के कारण पूँजी बाजार में अनिश्चिता की दशाएं व्याप्त हो गयी विस्थापितो की सम्पत्ति एवं पूँजी जो पाकिस्तान में रहे गयी उसका निबटारा करने में बहुत समय लग गया इस उधेड बुन में भारत में विनियोजित विदेशी पूँजी का भी भारत से पलायन होने लगा।

त्रिदलीय उद्योग सम्मेलन– यह दिसम्बर 1947 में आयोजित किया गया जिसमे प्रस्ताव पारित करके यह तय किया गया जिसमे प्रस्ताव पारित करके यह तय किया गया कि

उद्योग पतियो को उचित लाभ एवं श्रमिको को उचित मजदूरी दी जानी चाहिए ताकि औद्योगिक सम्बंधो में सुधार रहें।

औद्योगिक नीति की घोषणा– 6 अप्रैल 1948 में भारत सरकार द्वारा भारत के लिए प्रथम बार एक औद्योगिक नीति की घोषणा की गयी जिसने औद्योगिक क्षेत्र में व्याप्त अनिश्चिताओ को कम कर दिया तथा नवीन पूँजी को प्रोत्साहन दिया।

करो मे रियायतें– सन 1948 में भारत सरकार द्वारा उद्योगो मे कारो को कुछ छूट दी गयी इस उद्योगो द्वारा आंतरिक कोषो के निर्माण को प्रोत्साहन मिला और वे आधुनिककरण के लिए अशंत पूँजी की व्यवस्था करने योग्य हो सके।

विदेशी पूँजी के प्रति व्यवहारिक दृष्टिकोण– यह अश्वासन दिया गया यदि राष्ट्रीयकरण किया जायेगा तो विदेशी पूँजी भारत में अर्जित लाभ अथवा लाभाश के लिए देश को भुगतान के लिए विदेशी मुद्वा की व्यवस्था किये जाने का आश्वासन दिया गया।

औद्योगिक वित्त नियम की स्थापना– वित्त की कमी भारतीय उद्योगो के विकास के मार्ग में बहुत बडी बाधा थी औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना जुलाई सन 1948 की गयी इसकी स्थापना से औद्योगिक वित्त के क्षेत्र में एक नए युग का सूत्रपात हुआ।

कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम– इस अधिनियम ने देश में प्रथम बार श्रमिको के लिए सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में कुछ सुविधाएं प्रदान किए जाने का मार्ग प्रशस्त किया यह नियम 1948 के पास किया गया इसके अंतर्गत कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम की स्थापना की गयी जो श्रमिको की बिमारी चिकित्सा दुर्घटना की क्षतिपूर्ति की व्यवस्था करता है।

उद्योग विकास समिति– इसकी स्थापना नवम्बर 1950 में की गयी इस काम औद्योगिक उत्पादन के वृद्धि के तरीको तथा साधनो की उपलब्धि के विषय में राज्य को सलाह देना था।

प्रशुल्क आयोग की नियुक्ति– अप्रैल 1949 मे भारत सरकार ने एक प्रशुल्क आयोग की नियुक्ति की जिसमे अपनी रिर्पोट 1950 में दी इस रिर्पोट में अनेक महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए गए।

1.3 मजदूरी एवं वेतन से अर्थ–

मजदूरी से आशय उस भुगतान से है। जो कर्मचारी को कार्य के पारिश्रमिक के रूप मे दिया जाता है जो साप्ताहिक मासिक पाक्षिक होता है। मजदूरी की राशि में अंतर कार्य के घण्टो में परिवर्तन के अनुरूप होता है। मजदूरी प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की श्रेणी मे सामाप्त कारखानो में कार्य करने वाले श्रमिक तथा अपर्यवेक्ष कार्य कर्मचारियो को सम्मिलित किया जाता है। वेतन का अर्थ मजदूरी से भिन्न है। वेतन वह भुगतान है। जो कार्यानुसार नही दिया जाता वरन क निश्चित समय के लिए निश्चित राशि के रूप में दिया जाता है वेतन भोगी व्यक्तियो मे समस्त कार्यालय के कर्मचारी प्रशासकीय अधिकारी प्रबन्धक तथा अन्य पेशेवर व्यक्ति सम्मिलित किये जाते है। श्रमिक का भुगतान इस श्रेणी में नहीं आता।

योडर एवं हैनमैन के अनुसार– मजदूरी उन श्रमिको तथा अन्य कर्मचारियो को दी जाती है। क्षतिपूर्ति है। जो अपने नियोक्ता के लिए वस्तु एवं सेवा उपलब्ध करते है। तथा उत्पादन कार्यो के लिए नियोक्ता के उपकरणो का प्रयोग करते है।

बैन्हम– के अनुसार मजदूरी एक संविदा के अतःर्गत दी गई वह राशि है। जो नियोक्ता द्वारा श्रमिक को उसकी सेवाओं के बदले में दी जाती है। भारत में विभिन्न नियमो के अर्तःगत पारिभाषित मजदूरी मे मूल मजदूरी महँगाई भत्ते मकान किराया भत्ते नगरीय क्षतिपूर्ति भत्ते आदि सम्मिलित किए गए है। अवकाश काल की मजदूरी छुट्टियो का वेतन अतिरिक्त समय काम करने की मजदूरी बोनस उपस्थिति बोनस अच्छे व्यवहार एवं चरित्र का पुरस्कार कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम 1923 के अंतर्गत मजदूरी के भाग है। सेवा छटनी क्षतिपूर्ती नोटिस काल अथवा के स्थान पर दिया गया भुगतान मजदूरी भुगतान अधिनियम के अंतर्गत मजदुरी की श्रेणी में आता है।

न्यूनतम मजदूरी उचित मजदूरी एवं निर्वाह मजदूरी

न्यूनतम मजदूरी– अखिल भारतीय सेवा योजक संगठन के अनुसार न्यूनतम मजदूरी वह मजदूरी है। जो श्रमिक तथा उसके परिवार की भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करे निःसंदेह न्यूनतम मजदूरी मौद्रिक रूप से मिलने वाली वह राशि है। जिससे श्रमिक स्वयं का तथा अपने परिवार का पालन पोषण कर सकता है तथा अपने परिवार का पालन पोषण कर सकता है। तथा अपनी कार्य कुशलता बनाये रख सकता है।

उचित मजदूरी– सामाजिक ज्ञान शब्दकोश के अनुसार उचित मजदूरी वह मजदूरी है। जो श्रमिको को समान कुशलता कठिन व अरूचिकर कार्यो के लिए प्राप्त होती है। यह मजदूरी संस्था द्वारा किसी प्रामाणित स्तर पर निधारित की जाती है।

मार्शल– के अनुसार – किसी उद्योग में उचित मजदूरी उस मजदूरी की सापेक्षिक है जो सामान्यत उद्योग मे पायी जाय यदि श्रम की मांग की स्थिरता में पाये जाने वाले अंतर का ध्यान रखा जाय तो मजदूरी की दर का स्तर अन्य उद्योगो मे समान कठिन और अरूचिकर कार्य के लिए दिए गए प्रत्य के बराबर होगी जिसमे समान स्वाभाविक शक्तियो व समान व्यय की परीक्षा की आवश्यकता पड़ती है।

पीगू के अनुसार– उचित मजदूरो वह है। जो श्रमिको की सीमांत उत्पादकता के आधार पर ही की जाती है। यदि श्रमिको की मजदूरी वस्तु की सीमान्त उत्पादता से कम है। जो उचित मजदूरी नहीं कहा जा सकता है।

निरवाह मजदूरी– भारतीय संविधान के नीति निर्धारिक तत्वो की धारा 43 के अनुसार राज्य सभी कर्मचारियो को निर्वाह मजदूरी प्रदान करेगा न्यायाधीश हिगिन्स के अनुसार निर्वाह मजदूरी वह मजदूरी है। जो श्रमिक की भोजन आवास वस्त्र सामान्य आवास कठिन समय के लिए बचन संबधी आवश्यकताओं की संतुष्टि करती है तथा कलाकार की कला को पर्याप्त सम्मान प्रदान करती है। निर्वाह मजदूरी के भुगतान का लक्ष्य तीन चरणो में प्राप्त करना निश्चित किया गया था प्रथम चरण में सभी जाये तथा उनकी मजदूरी निर्धारित की जाये द्वितीय चरण मे समाज एवं उनकी मजदूरी निर्धारित की जाय तृतीय चरण में श्रमिको की निर्वाह मजदूरी का भुगतान किया जाय निर्वाह मजदूरी की राशि

न्यूनतम मजदूरी दर तथा निर्वाह मजदूरी की उच्चतम सीमा के बीच कही निर्धारित होनी चाहिए।

उचित मजदूरी के लाभ– उचित मजदूरी भुगतान से प्राप्त होने वाले लाभो को दो भागो में बाँटा जा सकता है।

श्रमिको को उसकी योग्यता के अनुरूप मजदूरी प्राप्त करने से अर्थात कुशल श्रमिको को अधिक मजदूरी अर्द्ध कुशल को उससे कुछ कम तथा अकुशल को न्यूनतम मजदूरी उनके मनोबल मे वृद्वि होती है तथा वह एक अच्छा उत्पादक बन सकता है।

कर्मचारी के मनोबल में वृद्धि होती है तथा नैतिक स्तर में सुधार होता है। क्योकि भुगतान कार्यक्रम सुव्यवस्थित तथा तर्क संगत होता है।

इससे पक्षपात के अवसर न्यूनतम हो जाते है। अथवा प्राय सामप्त हो जातें है।

कार्यक्रम अथवा पदोन्नति का कम आसानी से निर्धारित किया जा सकता है। जिससे श्रमिक अपनी पदोन्नति के प्रति आश्वस्त रहता है। और कार्य में अधिक रूचि प्रदर्शित करता है।

नियोक्ता को लाभ

वे कुशल तथा दक्ष श्रमिको को उचित पुरस्कार द्वारा आकर्षित करने मे सफल होतें है। वह अपनी श्रम शक्ति का भली भाँति आयोजन कर सकतें है तथा उत्पादन लागत की दृष्टि से श्रम तत्व की लागत का नियंत्रण कर सकतें है।

इससे कर्मचारी मनोबल तथा अभिप्रेरणा में वद्धि होती है। क्योकि सुनियोजित प्रणाली कर्मचारी की आवश्यकताओ के आधार पर निश्चित की जाती है।

उचित मजदूरी के निर्धारण के परिणाम स्वरूप नियोक्ता के श्रम संघों के साथ सामूहिक सौदेवाजी मे किसी प्रकार की कठिनाइयों का सामना नही करना पड़ता क्योकि मजदूरी स्तर तर्कसंगत होतें है। इससे औद्योगिक शांति के विकास में सहयता मिलती है।

मजदूरी की असमानता के फलस्वरूप श्रमिको मे आपसी मनमुटाव मतभेद अथवा विवाद नही उत्पन्न हो पातें है।

मजदूरी निर्धारण घटक – श्रमिको तथा विभिन्न कार्यो के लिए मजदूरी निर्धारण उस स्तर तक पहुंच गया है। कि नैतिक तथा सामाजिक न्याय के आधार पर उचित मजदूरी का विचार किया जा सकता है। उचित मजदूरी का निर्धारण करने वाले तत्व निम्न है।

कार्य की अपेक्षाएं– ऐसे कार्य जिनमे श्रम कौशल उत्तरदायित्व तथा जोखिम की मात्रा कम होती है। उनके लिए कम मजदूरी निर्धारित की जाती है तथा जिन कार्यों में इन सभी गुणो की अधिक आवश्यकता होती उनके लिए मजदूरी की दर भी ऊची होती है।

श्रमिको की सौदेवाजी की क्षमता– वे उद्योग जहाँ श्रम संघ शाक्तिशाली होते है। वहाँ श्रम संघ सामूहिक सौदेवाजी के माध्यम से अधिक मजदूरी प्राप्त करने में सफल होते है।

निर्वाह लागत– मूल्य निर्देशांक मे परिवर्तन के साथ मजदूरी की दरो मे भी परिवर्तन ' होता रहता है। जिसमे कि श्रमिको की क्रय क्षमता को यथा सम्मान समान स्तर पर रखना आवश्यकता है अतः निदेशाको मे वृद्वि के साथ मजदूरी की दरो वृद्वि आवश्यक है। जहाँ मजदूरी का निवेश के साथ कोई समन्वया नही है। वहाँ श्रम संघ अथवा श्रमिक तथा नियोक्ता के मध्य सौदेबाजी क्षमता के आधार पर मजदूरी का निर्धारण किया जाता है।

देयक्षमता– किसी उद्योग में दी जाने वाली मजदूरी इस पर भी निर्भर करती है। कि उद्योग जो अधिक लाभ अर्जित करते है। प्रायः अधिक मजदूरी देने में सक्षम होते है किन्तु अधिकांश उद्योग जो अधिकांशत कम लाभ अर्जित करतें है। अपने कर्मचारियों को कम मजदूरी देतें है।

प्रचालित मजदूरी की दरें– अनेक नियोक्ता प्रचलित दरो की आधार पर अपनी मजदूरी की दर निर्धारित करतें है। मजदूरी की दर के निर्धारण के समय न केवल स्थानीय बाजार की दरें ही ध्यान में रखतें है। अपितु अपने ही उद्योग की किस्म के अन्य उद्योग तथा समान श्रमिक अपने ही उद्योग की किस्म के अन्य उद्योग तथा समान श्रमिक के लिए समान वेतनमान का भी ध्यान रखते है। बाजार में श्रम की मांग तथा पूर्ति का भी ध्यान रखा जाता है। यदि किसी विशिष्ट प्रकार के श्रम की पूर्ति कम है। तों इसके लिए मजदूरी की ऊची दर भी दी जा सकती है। किंतु श्रमिक पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध हैं अथवा श्रम की बहुलता या बेरोजगारी फैली हुई है। तो मजदूरी की दर कम होगी।

मजदूरी नीति– औद्योगिक शांति के लिए मजदूरी की एक सुनियोजित नीति अपनयी जानी चाहिए कार्य मूल्यांकन के आधार पर विभिन्न पदो एवं कार्यो के लिए मजदूरी की दर प्रथक प्रथक रखी जा सकती है। कार्य मूल्यांकन द्वारा कार्य प्रणाली कार्य की कठिनाइयां एवं मूल्यांकन द्वारा कार्य प्रणाली कार्य की कठिनाइयां एवं उत्तरदायित्व कार्य के लिए वांछित कुशलता आदि बातो का मूल्यांकन किया जाता तथा मजदूरी का औचित्य सिद्ध किया जाता है।

अच्छी मजदूरी नीति निम्न तत्वो पर आधारित होनी चाहिए

मजदूरी निर्धारण एक निश्चित योजना के अनुसार– होना चाहिए जिससे कि कार्य समबन्धी विविधिताओ जैसे कुशलता श्रम उत्तरदायित्व जोखिम आदि के अनुसार मजदूरी का ढाँचा तैयार किया जा सके तथा विभिन्न वेतमानी में भिन्नता का औचित्य प्रदर्शित किया जा सके

- मजदूरी की दर क्षेत्र में प्रचालित संतुष्ट रह सके और मजदूरी की दरो के अनुरूप होनी चाहिए जिससे कि श्रमिक संतुष्ट रह सके और मजदूरी से संबंधित औद्योगिक विवाद उत्पन्न न हो
- यदि कार्य समान स्तर का हो समान रूप से कठिन है। तथा उसके क्रियान्वयन में सामान्य कुशलता की आवश्यकताओ हो तो ऐसे कार्य कर रहें सभी श्रमिको को समान व मजदूरी दी जानी चाहिए
- श्रमिको की कार्य प्रणली के अंतर सात करने के लिए समान प्रभापो का प्रयोग किया जाना चाहिए

- मजदूरी सम्बन्धी परिवादो के निवारण हेतु एक निश्चित प्रणाली का अनुकरण किया जाना चाहिए
- मजदूरी की दर निर्धारण करने की प्रविधि कर्मचारियो तथा श्रम संघो को ज्ञात होनी चाहिए
- मजदूरी का नियन्त्रण लागत नियन्त्रण तथा प्रवर्तन श्रम बजट से किया जाना चाहिए
- मजदूरी व्यवस्था सरल बोधगम्य तथा कम खचीली होनी चाहिए
- मजदूरी भुगतान प्रणाली लोचशील होनी चाहिए
- मजदूरी पर्याप्त होनी चाहिए जिससे कि श्रमिक अपनाव अपने परिवार का असानी से पालन पोषण कर सके तथा जीवन में आने जाने वाली असंदिग्धताओं से अपनी रक्षा कर सके।

भारत मे मजदूरी नीति का विकास– हमारे देश मे स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत न्यूनतम मजदूरी तथा उचित मजदूरी के सिद्धांतो पर बल दिया गया है। सन 1948 में न्यूनतम मजदूरी अधिनियम पारित किया गया है इसके अन्तर्गत केंद्रीय तथा राज्य सरकारों द्वारा न्यूनतम मजदूरी दर निर्धारित करने तथा उन्हे लागू करने का प्रावधान रखा गया जिसे श्रमिको का शोषण समाप्त हो सके। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम लागू करने का मूल उद्देश्य शोषिति श्रमिक का उचित दर से वेतन दिलवाना तथा औद्योगिक शाति के लिए वातावरण तैयार करना था इससे आशा तथा श्रमिक उद्योगो की ओर उत्कृष्ट होगा अधिनियम के अन्तर्गत न्यूनतम समानुसार मजदूरी दर न्यूनतम कार्यानुसार मजदूरी दर प्रभावित्त निश्चित मजदूरी दर तथा विभिन्न व्यवसायो के लिए अधिसमय कार्य की मजदूरी दर आदि निश्चित करने की व्यवस्था की गयी है। क्षेत्र विशेष मे वयस्क तथा वृद्वा बच्चों तथा नवसिधुओं के लिए कक्षाएं चलाने के लिए अधिक वेतन दिए जाने का प्रावधान किया गया।

योजनाकाल में मजदूरी नीति– भारत मे श्रमिकों के लिए उचित नीति अपनाने के प्रयत्न प्रारंभ से ही किये जाते रहें है। विभिन्न योजनाओ में किये गयें प्रयत्न इस प्रकार है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना– प्रथम योजना के प्रारंभ से ही सरकार का उद्देश्य आय की असमानतओ को कम करना रहा है।

- कुल राष्ट्रीय आय मे से श्रमिक को अत्यन्त उचित अंश मिलना चाहिए।
- उस वर्ग को प्राथमिकता दी जानी चाहिए जिनकी मजदूरी अजीविका स्तर पर से कम है।
- मजदूरी के प्रमाणीकरण सम्बन्धी कार्य तेजी से किये जान चाहिए तथा उनका क्षेत्र विस्तृत किया जाना चाहिए।
- महँगाई भत्ते का 50 प्रतिशत भाग मूल मजदूरी में मिला दिया जाना चाहिए।
- निजी उद्योग में सावजनिक उद्योगो की भांति न्यूनतम मजदूरी लागू की जानी चाहिए जिससे दोना प्रकार के क्षेत्रों में कार्यरत श्रमिको में किसी प्रकार की असमानता न रहें।

- मजदूरी की समस्या के समाधान हेतु विदेशी विशेषज्ञो की सलाह भी ली जानी चाहिए।
- मजदूरी की समस्या पर विचार के लिए त्रिपक्षीय मण्डल का गठन किया जाना चाहिए।
- न्यूनतम मजदूरी अधिनियम को अधिक प्रभावी बनाया जाना चाहिए।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना– द्वितीय पंचवर्षीय योजना में काल में मजदूरी नीति इस प्रकार रही–

- मौद्रिक मजदूरी से ही मजदूरी की समस्या का हल नही होता है।
- मजदूरी नीति निर्धारण के लिए त्रिपक्षीय बोर्ड गठित किए जाने चाहिए।
- मजदूरी नीति आर्थिक प्रगति के अनुकूल हो तथा साधनो का उचित विभाजन करने में सहायक होनी चाहिए।
- उचित मजदूरी नीति के द्वारा समाजवादी समाज का गठन संभव है।
- मजदूरी सम्बन्धी समंक पर्याप्त मात्रा में एकत्र किया जाना चाहिए।
- मजदूरी निर्धारण हेतु एक मजदूरी आयोग का गठन किया जाना चाहिए।
- अजीविका लागत निर्देशांको में परिवर्तन किया जाना चाहिए।

तृतीय पंचवर्षीय योजना– तृतीय पंचवर्षीय योजना काल में मजदूरी नीति में परिवर्तन किया गया–

- दलित वर्ग के श्रमिको को न्यनतम मजदूरी दिलाने का उत्तरदायित्व सरकार का होना चाहिए।
- श्रमिको को लाभांश मे भी हिस्सा प्रदान करने हेतु लांभाश भुगतान अधिनियम 1965 पारित किया गया।
- मजदूरी उत्पाद एवं मूल्य संबंधी प्रवृत्तियों का अध्ययन करने के लिए त्रिपक्षीय सरकार नियोक्ता और श्रमिक प्रतिनिधि सर्वेक्षण दल स्थापित किया गया।
- न्यूनतम मजदूरी निर्धारण का सुझाव भी इसी काल मे श्रम नीति आयोग द्वारा दिया गया।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना– पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत मजदूरी नीति के विभिन्न पहलुओं पर पकाश डाला गया है। इसके अन्तर्गत वर्तमान मजदूरी अन्तर जो कुशलता के आधार पर किये गयें हैं। सम्मिलित किए गए है। तथा श्रमिको की वास्तविक मजदूरी को संरक्षण उत्पादन वृद्वि निम्न आय वर्ग के प्रति सामाजिक दृष्टि से विचार अभिप्रेरण प्रणाली पर बल तथा मजदूरी वृद्वि आदि समस्याओ पर भी विचार विमर्श किया गया है। मजदूरी संबंधी विचार करतें समय आवश्यक बातें ध्यान में रखने के लिए चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में निम्न व्यवस्था की गयी है–

- निजी क्षेत्र तथा सरकारी क्षेत्र में मार्ग दर्शन के रूप में समायोजित आय नीति बनायी जानी चाहिए।

- मजदूरी नीति की दृष्टि से वस्तुओं के मूल्य में स्थिरता आवश्यकता है।
- उचित मजदूरी तथा स्वास्थ्य पद वस्तुओं की आवश्यकताओं पूर्ति की दृष्टि से दीर्घकालीन मजदूरी योजना बानायी जानी चाहिए। मूल्य वृद्वि के साथ श्रमिको के रहन सहन का स्तर सि प्रकार निर्धारित किया जाय इस समस्या का भी निराकरण किया जाना चाहिए।
- मूल्य वृद्धि के साथ महँगाई भत्तें की दर का संबंध स्थापित कर दिया जाना चाहिए किंतु सभी प्रयास करने के उपरांत भी मूल्य वृद्धि के प्रभाव को पूर्णत समाप्त करना सम्भव नही होगा।
- कुल मजदूरी में ये तत्व सम्मिलित होने चाहिए न्यूनतम मजदूरी जीविका निर्वाह के लागत का तत्व निम्नतम श्रेणी के श्रमिको का प्राप्त करने में रखकर मजदूरी की दर निर्धारित की जानी चाहिए।
- मजदूरी प्रणाली का आधार कार्य निष्पादन होना चाहिए अर्थात उत्पादन के आधार पर मजदूरी का निर्धारण होना चाहिए।

मजदूरी नीति निर्धारण में कठिनाइयां– सन 1974 में हुई मजदूरी नीति सम्बन्धी सेमिनार मे निम्न समस्याओं पर विचार किया गया।

- उत्पादन एवं मजदूरी किया गया
- मूल्य एवं मजदूरी का सम्बंध
- मजदूरी एवं रोजगार का सम्बध
- मजदूरी मूल्य एवं उपभोक्ता का सम्बन्ध
- मजदूरी एंव उत्पादकता का सम्बन्ध

इस तथ्य में कोई दो मत नही हो सकते कि भारतीय श्रम मजदूरी की दर बहुत कम है। अतः: हमारी मजदूरी नीति का वास्तविक उद्देश्य श्रमिको के रहन सहन को स्तर में वृद्वि करना होना चाहिए।

यह सुझाव दिया गया है कि उत्पादन में मजदूरी बिल का भार बहुत कम है। फिर भी मजदूरी में बढोत्तरी को मूल्य वृद्वि का कारण माना जाता है। यह उचित नही है। राष्ट्रीय स्तर पर रही तो क्षेत्रीय स्तर पर न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण किया जाना चाहिए

श्रमिको में कार्य के प्रति यह भावना जाग्रत करना चाहिए कि वो अपनी ही लिए उत्पादन कर रहें है जिससे उपभोक्ता के हितो को क्षति न हो श्रमिक सहभागिता की प्रोत्साहन करने से यह समस्या हल हो सकती है।

मजदूरी एवं मूल्य सम्बन्ध इस दृष्टि से निम्न निर्णय लिये गयें

मजदूरी से कुल आय का सम्बन्ध इस प्रकारस्थापित किया जाना चाहिए कि विना परिश्रम किए जाने वाले का अंश कम किया जा सके आय में सरकार का हिस्सा अधिक हो

मूल्य वृद्धि के कारण मजदूरी में बृद्धि की मांग की जाती है। न कि आजीविका मजदूरी देने के लिए अथवा हैं अतः निम्नतम वर्ग को आजिविका मजदूरी देने के लिए अथवा आजीविक लागत बढने के कारण मजदूरी में वृद्धि न मजदूरी के कारण नही होती बल्कि एकाधिकार नियंत्रित उत्पादन घाटे का बजट अनुत्पादक व्यय आदि कारणो से होती है। अतः इन तत्वो को समाप्त करने का प्रयप्त किया जाना चाहिए।

मजदूरी एवं रोजगार सम्बन्ध– मजदूरी बोर्ड श्रम संघ तथा सामूहिक सौदेवाजी के प्रोत्साहन के फलस्वरूप वेतन मजदूरी एवं भत्तो में तीव्र गति से संशोधन होने लगा है। मजदूरी नीति में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि अधिक ऊँची मजदूरी निर्धारित किये जाने पर श्रम बचाने वाले उपकरणो का प्रयोग प्रांरभ किया जा सकता है। अतः मजदूरी उस सीमा तक ही बढाना सम्भव है। जहाँ तक देशवासियो को रोजगार उपलब्ध होता है। श्रम के स्थान पर स्वचालित मशीनो का प्रयोग साधारण बात नही बन जायें।

मजदूरी मूल्य एवं उपभोक्ता सम्बन्ध– श्रमिक उत्पादन का साधन भी है। और उत्पादित वस्तुओ का उपभोक्त मॉग का सृजन करती है। प्रभावी मॉग अधिक हाने पर उत्पादन की क्रिया में वृद्धि होती है। अधिक होने पर श्रमिक की कुशलता में बृद्धि होती है। तथा कई लाभ होते है। इससे यह स्पष्ट होता है कि मजदूरी मूल्य एवं उपभोक्ता में गहरा सम्बंघ है। अतः मजदूरी नीति इस प्रकार निर्धारित की जानी चाहिए कि इन तीनो कारणो में संतुलन बना रहें।

सुझाव– मजदूरो का स्तर निर्धारण करने के लिए सुझाव दिया गया है। कि उपयुक्त सभी बातो को ध्यान में रखतें हुए न्यूनतम राष्ट्रीय मजदूरो दर निर्धारित की जानी चाहिए यदि क्षेत्रीय विषमताओं के कारण राष्ट्रीय स्तर पर न्यून मजदूरी निर्धारित करने से अधिक लाभ नही हो तो क्षेत्रीय आधार पर न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की जानी चाहिए 15वें भारतीय श्रम सम्मेलन में भी आवश्यकता आधारित मजदूरी निर्धारण पर अधिक बल दिया गया है।

वैधानिक रूप से लिंग भेद के आधार पर मजदूरी की दरो में अंतर रखना अनुचित है। अतः: सभी श्रमिको को बिना लिग भेद के समान कार्य के लिए समान वेतन दिया जाना चाहिए।

इसी प्रकार श्रमिक के स्थायी व अस्थायी होने पर भी समान रूप से मजदूरी की जानी चाहिए

श्रमिक वर्ग तथा कार्यालयों कर्मचारी वर्ग के बीच वेतन का अंतर कम किया जाना चाहिए।

औद्योगिक विवेकीकरण एवं आधुनिकीकरण की समस्याओ पर विचार किया जा चूका है। औद्योगिक उत्पादकता की विचारधारा का भी विवेकीकरण से निकट का सम्बंध है। क्योकि दोनो के उद्देश्यो मे इतना साम्य है कि प्राप्त उत्पादकता को विवेकीकरण का पर्यायवाची मान लिया जाता है। विवेकीकरण एवं उत्पादकता दोनो के उद्देश्य लगभग एक समान है। क्योकि दोनो में कुशलताओं में वृद्वि करने सप्रत्ययो को रोकने तथा साधनो के सर्वोत्तम उपयोग करने क प्रयत्न किए जाते है। फिर भी दोनो को एक ही अर्थ में प्रयुक्त करना सही नहीं होगा विवेकीकरण समस्त उद्योग को एक समूह मानते हुए उस पर लागू किया जाता है। जबकि उत्पादकता ही योजना का क्रियान्वयन उत्पादन की स्तर पर होता है।

उत्पादकता श्रमिको की निपुणता एवं कार्यक्षमता उत्पादन की तकनीक तथा प्रबंधकीय विधियो में सुधार पर अर्थिक बल देती है। जबकि विवेकीकरण में उनके साथ साथ वित्तीय एवं विपणीय सुधारो को भी अल्पकाल मे बेरोजगारी अथवा छटनी की समस्या उत्पन्न करती है। किंतु दीर्घकाल मे यह समस्या का निराकरण भी करती हैं

उत्पादकता का अभिप्राय–

उत्पादकता का आशय एक ओर कुल उत्पादन तथा दूसरी ओर उसके लिए प्रयुक्त किए गयें साधनो के बीच सम्बंध अथवा अनुपात से है। दूसरे शब्दो का अभिप्राय उस अनुपात से है। जो कुल उत्पादन तथा उसके लिए प्रयोग में लाये गयें साधनो के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है। यदि साधनो की तुलना में उत्पादन अधिक है। तो यह अनुकूलता का सूचक होगा और उत्तम उत्पादकता का प्रतीक माना जायेगा इसके विपरीत यदि उत्पादन के विभिन्न साधनो की तुलना में कुल उत्पादन अपेक्षोकृत कम है। तो यह प्रतिकूल स्थिति का सूचक होगा और न्यून उत्पादकता का प्रतीक माना जायेगा कुल उत्पादन का तुलना में प्रयोग में लाये गये विभिन्न साधनो की संयुक्त उत्पादकता भी सात की जा सकती है तथा प्रत्येक साधन जैसे श्रम कच्चे पदार्थ मशीनो की प्रथक उत्पादकता भी ज्ञात की जा सकती है। दूसरी शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि कुल उत्पादन मे उत्पादन के किसी साधन का जो आनुपातिक योगदान मे उत्पादन को किसी साधन का उत्पादकता की संज्ञा प्रदान की जाती है।

श्रीयुक्त बी०बी० लाल के शब्दो मे उत्पादकता का आशय उस मानवीय सम्बंध से है जो एक ओर सुपरिभाषित उत्पादन तथा दूसरी ओर साधनो के बीच होता है अर्थात एक ऐसा सम्बंध जो कि उत्पादन के परिणाम तथा सम्बंध उत्पादन साधनो के बीच निर्धारित समय एवं निश्चित दशाओं का अंतर्गत वित्तीय एवं भौतिक दोनो रूपो मे होता है

उत्पादकता की माप–

औद्योगिक क्षेत्रो मे उत्पादकता का अभिप्राय प्राय उत्पादक इकाईयों के उत्पादन क समस्त साधनो अथवा प्रथक रूप से अलग अलग साधनो के कुल उत्पादन में अनुपात से होता है। जैसे कुल विनियोजित पूँजी को उत्पादकता श्रम की उत्पादकता आदि। औद्योगिक ईकाइयों मे प्रायः श्रम की उत्पादकता तथा मशीन की उत्पादकता को नापने का अधिक चलने हैं इन दोनो उत्पादकताओ की माप निम्न प्रकार से किया जा सकता हैः–

क. श्रम की उत्पादकता– इसे दो प्रकार से नापा जा सकता है। प्रथम प्रति श्रमिक उत्पादकता तथा द्वितीय प्रति श्रमिक घंटे उत्पादकता और इसके लिए अग्र सूत्र काम में लायें जातें है।

ख. मशीन की उत्पादकता– मशीन की उत्पादकता वह अनुपात है। जो कि एक ओर कुल उत्पादन भार अथवा माप मे तथा दूसरी ओर कुल प्रयुक्त मशीने घण्टो के मध्य होता है। यह अनुपात मशीने के उपयोग की गहनता एवं कुशलता को बतलाता है तथा इसे निम्न प्रकार से ज्ञात किया जाता है।

ग. पूँजी की उत्पादकता– इसे वित्तीय प्रबंध की भाषा मे पूँजी आवृति भी कहा जाता है। यद्यपि इन दोनो अनुपातो में थोडा अन्तर अवश्य है। पूँजी की उत्पादकता एक ओर कुल विशुद्व उत्पादन तथा दूसरी ओर विनियोजित विशुद्व पूँजी के अनुपात को कहते है। जबकि पूँजी आवृति वह अनुपात है। जो एक और विशुद्ध विक्री तथा दूसरा आरे विशुद्व विनियोजित पूँजी के मध्य होता है। पूँजी की उत्पादकता की माप भी उसी सूत्र के आधार पर की जा सकती हैं

घ. भूमि की उत्पादकता– इस अनूपात के द्वारा भूमि के उपयोग की कुशलता को नापा जा सकता है। इसे औसत प्रति हेक्टेयर उत्पादन भी कहा जा सकता है। इसे औसत प्रति हेक्टेयर इन्हे भी कहतें है। इस निम्न सूत्र के आधार पर किया जाता है।

उत्पादकता को प्रभावित्त करने वाले तथ्यः– उत्पादकता अनेक ऐसे तत्वो से प्रभावित्त होती है। जो परस्पर एक दूसरे से इतने अधिक समबद्ध है। कि उनमे प्रथम प्रभाव को स्पष्ट करना अत्यन्त कठिन है। ऐसे तत्व एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए ही नहीं है। बल्कि एक दूसरे से प्रभावित्त भी होते है। अतः इनके प्रभाव का प्रथक करके उसका अलग से विश्लेषण करता और भी जटिल कार्य हो जाता है। उत्पादकता पर निम्नलिखित तत्वो का प्रभाव पड़ता है।

1. जैसे कि ऊपर कहा जा चुका है। उच्च उत्पादकता के लिए तकनीक का उन्नत स्तर आवश्यक होता है। किंतु आधुनिक मशीनो एवं यंत्रो की स्थापना तथा उन्नत तकनीक के प्रयोग के लिए पर्याप्त वित्त की आवश्यकता होती है। यदि ये सूविधाएं देश में उपलब्ध नही है। तो इन्हें विदेशो से आयात करना आवश्यक हा जाता है। जिसके लिए विदेशी विनिमय की सुविधाएं उपलब्ध नही है। तो इन्हे विदेशो से आयात करना आवश्यक हो जाता है। जिसके लिए विदेरी यह कहा जा सकता है कि उत्पादकता की समस्या आधुनिककरण एवं विवेकीकरण से जुडी हुई है और आधुनिकीकरण एव विवेकीकरण से जुडी हुई है और आधुनिकीकरण एवं विवेकीकरण का प्रश्न पर्याप्त मात्रा में स्वदेशी एवं विदेशी पूँजी की उपलब्ध से जुड़ा है। व्यवहार में यह देखा गया हैं कि पर्याप्त पूँजी की सुविधाएं उपलब्ध तकनीक का प्रयोग करके उत्पादकता बढाने का सफल प्रयास अनेक उद्योगो द्वारा किया गया है।

2 तकनीकी तत्व– पुरातन परम्परागत धीमी तथा अवैधानिक उत्पादन की विधियो क स्थान पर यदि अधिक आधुनिक वैज्ञानिक तथा सुधरी हुई उत्पादन विधियों का प्रयोग किया जाता है। तो निश्चित ही इससे उत्पादकता में वृद्वि होती है। इस प्रकार संयत्रो एवं उपकरणो की उत्कृष्टताः भी उत्पादकता को बढाने में सहायक होती है। यांत्रिक शक्तियो का प्रयोग स्वचालित तीव्रग्रामी मशीने नवीन अविष्कारो के आधार पर किये जाने वाले नवकरण के प्रयास प्रति श्रमिक उत्पादकता को ऊँचा उठाने में सहायक होता है विकसित राष्ट्रो तथा विकासशील देशो मे प्रयुक्त उत्पादन तकनीक का स्तर अधिक उन्नत होता है तथा उन देशो मे उसमें और अधिक सुधार के प्रयास निरंतर किये जाते है।

3 प्राकृतिक तत्व– प्राकृतिक दशाओ का प्रभाव उत्पादकता पर निश्चित रूप से पडता है। कृषि उपज तो बहुत कुछ प्राकृतिक दशाओ की अनुकुलता है। पर ही निर्भर होती है। जहाँ एक औद्योगिक उत्पादन का प्रश्न है प्राकृतिक दशाएं इन्हे परोक्ष रूप से इसे प्रभावित्त करती है। उदाहरण के लिए जलवायु श्रमिको की कार्य कुशलता पर अनुकूल अथवा

प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है। सूती वस्त्र उद्योग भी जलवायु की अनुकूलता का बहुत महत्व होता है। जिनके अभाव में वातानुकल की व्यवस्था करना आवश्यक हो जाता है।

4 प्रशासनिक तत्व– सरकार अपनी वित्तीय द्रत्य एवं कर सम्बधी नीतियों के द्वारा भी उत्पादकता के स्तर मे बृद्धि करने की दिशा मे परोक्ष रूप से सहयोग प्रदान करती है। उद्योगो को आधुनिकीकरण के लिए पर्याप्त एवं सस्ती पूँजी की सुविधा सरकार वित्तीय संस्थानो के माध्यम से कर सकती है। करो मे की गयी रियायतें भी उत्पादकता को बढाने में परोक्ष रूप से सहायक सिद्ध हुई है। शक्ति ईधन यातायात जल सुविधाओ आदि के लिए सरकार द्वारा की गयी व्यवस्थाएं निश्चित रूप से उत्पादकता मे वृद्वि करती है। जबकि बिजली संकट यातायात की रूकावटे श्रमिको मे अशांति आदि के कारण उत्पादकता का स्तर प्रायः गिर जाता है।

5 प्रबन्धकीय तत्व– उत्पादन की कुशलता अन्तोगत्वा उत्पादन के विभिन्न साधनो के समुचित समन्वय पर निभ्रर होती है। जो स्वयं प्रबंधकीय कुशलता के आधार पर ही प्राप्त किया जा सकता है। संगठन की क्षमता उचित निर्णय लेने की योग्यता दर्शिता तथा जोखिम उठाने की तत्परता आदि ऐसे प्रबंधकीय गुण है। जो किसी औद्योगिक इकाई की उत्पादकता बढाने में सहायता होती है।

6 सामाजिक तत्व– सामाजिक दशाएं प्रथाए परम्पराएं एवं स्वास्थ्य भी किसी समाज की उत्पादकता को प्रभावित्त करती है। प्रचलित सामाजिक मूल्य एवं जीवन के प्रति लोगो के दृष्टिकोण भी महत्व रखतें है। उत्पादकता के अवरोधक होते है। शिक्षित एवं प्रगतिशील समाज मे उत्पादकता अधिक सरलता एवं शीघ्रता से बढायी जा सकती है।

उत्पादकता के माप का महत्व– उत्पादकता सूचकांक किसी देश के आर्थिक एवं औद्योगिक परिवर्तनो के स्वरूप एवं स्तर पर उत्तम प्रकाश डाल सके।

1 आर्थिक विश्लेषणः– ये सूचकांक किसी देश में एक निर्धारित अवधि में औद्योगिक विकास के स्तर एवं स्वरूप में हुए परिवर्तन पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालतें है। जिसके आधार पर आधुनिकीकरण उन्नत उत्पादन विधियो तथा स्वचलित मशीनो के उपयोग के विषय मे भावी योजनाओं का निर्माण किया जा सकता है।

2 साधनो का आवंटन– अल्प विकसित देशो मे जहाँ प्राय साधनो की कमी होती है। आर्थिक नियोजन के लिए उपलब्ध सीमित साधनो के आवंटन में प्राथमिकता ऐसे उद्योगो को दी जाती है। जिनमे उत्पादकता का स्तर ऊँचा है। ताकि विकास की दर को बढ़ाया जा सके और अतः कम उत्पादकता वाले उद्योगो के लिए अधिक साधनो की व्यवस्था की जा सके।

3 तुलनात्मक आधार– उत्पादकता का सांख्यिकीय माप किसी देश के विभिन्न उद्योगो की उत्पादकता की तुलना का एक आधार प्रस्तुत करता है। उत्पादकता सूचकांकों के आधार पर विभिन्न देशो में किसी उद्योग विशेष की उत्पादकता के स्तर की तुलना की जा सकती है।

4 मूल्यांकन का मापदण्ड– उत्पादक सूचकांक किसी उत्पादक इकाई अथवा किसी उद्योग विशेष द्वारा किसी निर्धारित अवधि में की गयी प्रगति के मूल्यांकन के उत्तम मापदण्ड मापे जा सकतें है। इनके आधार पर विभिन्न इकाईयो की उत्पादन कुशलता में किये गये सुधार का मूल्यांकन किया जा सकता है।

5 नीति निर्धारण– उत्पादकता सूचकांक वेतन मजदूरी श्रमिको की कार्य दशाओं श्रमिकों के कार्य के घण्टे आदि विषय में उचित नीतियों के प्रतिपादन मे अत्यन्त सहायक सिद्ध होते है।

6 औद्योगिक सम्बंध– मिल मालिको एवं श्रमिको के मध्य व्याप्त अनेक भ्रान्तियों को दूर करने मे सांख्यिकी समंयक ठोस आधार का काम करतें हैं इनसे औद्योगिक विवादो को सुलझाने मे सहायता ली जाती है तथा श्रम पूँजी सम्बधो मे सुधार लाने का प्रयास किया जा सकता है।

उत्पादकता की माप की कठिनाईयां एवं परिसीमाएं–

उत्पादकता माप की अनेक परिसीमाएं ही नही है। अपितु उत्पादकता का माप करतें समय अनेक प्रकार की कठिनाइयां भी सामने आती है। ये ऐसी कठिनाईयों है जिनका कोई सर्वमान्य हल नही दिखायी देता है। ये कठिनाईयो एवं परिसीमाएं निम्नलिखित है :–

1 सेवाओं की उत्पादकता – सभी प्रकार को उत्पादनो की उत्पादकता का माप नही किया जा सकता है। ऐसी उत्पादित वस्तुओ जैसे सीमेण्ट कपडा कोयला इस्पात आदि की उत्पादकता की माप की जा सकती है। कितु जहाँ तक सेवाओं का प्रश्न है। इनकी उत्पादकता का सही माप नही किया जा सकता उदाहरण के लिए सेवा उद्योगो की उत्पादकता का सही मापन संभव नही होगा है जैसे बैंको की सेवाएं आदि।

संयुक्त परिणाम – उत्पादकाता वृद्धि मे उत्पादन के विभिन्न साधनो के प्रथक योगदान की गणना करना प्राय संभव नही होता है। इसका केवल एक मोटा अनुमान लगाया जा सकता है। क्योकि यदि उत्पादकता में वृद्धि होती है। तो यह उत्पादन के विभिन्न साधनो का एक मिला जुला परिणाम होता है। अतः उत्पादन में किसी एक साधन की विशिष्ट भूमिका का सही विश्लेषण करना कठिन होता है।

3 उत्पादकता सूचकांको के निर्माण में कठिनाई– ऐसी वस्तुओ के उत्पादन सूचकांक सरलता से ज्ञान किये जा सकते है। जिनमे एकरूपता या समानता हो कितु विभिन्न रूपो प्रकारो की वस्तुओ के उत्पादकता सूचकांको की गणाना करना अधिक कठिन होता है।

4 दीर्घकालीन तुलना– समय के साथ साथ उत्पादन की विधियों एवं तकनीको मे परिवर्तन रहता है। जो उत्पादकता पर पर्याप्त प्रभाव डालतें है। अतः लंबे समय के उत्पादकता सूचकांको के आधार पर यदि कोई तुलनात्मक विश्लेषण किया जाता है। तो उसके निश्कर्ष गलत हो सकतें है।

5 मूल्य वृद्धि की समस्या – यदि वित्तीय आधार पर उत्पादक सूचकांको की गणना की जाती है। तो वह मुद्रा के मूल्यो में होने वाले परिवर्तनो से प्रभावित्त होती है। भौतिक अर्थ समान उत्पादन रहने पर भी मौद्रिक अर्थ मे मूल्य वृद्धि के कारण उत्पादकता बढ़ सकती

है। अतः उत्पादकता सूचकांक की गणना करते समय मूल स्तर मे होने वाले परिवर्तन लिए उचित समायोजन करने की आवश्यकता होती है।

उत्पादकता के मूल सिद्वांत :–

यह पहले ही कहा जा चूका है कि उत्पादकता समृद्धि की कुंजी है इस बढी हुई समृद्धि मे सभी सम्बंद्व पक्षो का योगदान रहता है। अतः यदि उत्पादकता आंदोलन को सफल बनाना है। कि तो वह ऐसे सिद्वांत पर आधारित होना चाहिए जा सर्वमान्य हो न्यायसंगत हो एवं यथा संभव स्वैच्छिक आधार पर प्रतिपादित किया गया हो यह आवश्यक है कि सभी पक्षो का पारस्परिक सहयोग इसके लिए प्राप्त किया जायें यह सहयोग स्वैच्छिक आधार पर होना चाहिए सभी पक्षो को आंदोलन की उपयोगिता से भली प्रकार अवगत करा दिया जाय तो निश्चय ही उन सबका पूर्ण सहयोग प्राप्ति किया जा सकता है।

उत्पादकता के जो उद्देश्य निर्धारित कियें जाये वे व्यापक होने चाहिए न कि संकुचित प्रायः यह देखा जाता है। कि मिल मालिको के लाभ में वृद्धि करने के लिए ही उत्पादकाता की दुहाई दी जाती है। फल यह होता है। कि इससे श्रमिको का सहयोग नही मिल पाता है। क्योकि वे ऐसे प्रयासो को संदेह की दृष्टि से देखने लगतें है। एक बार संदेह उत्पन्न होने पर फिर उसे दूर करना बडा कठिन होता है। सरकारी दबाब अथवा अधिनियम के द्वारा ऐसी योजनाओ कभी सफल नही हो सकती है। ऐसे प्रयास किये जाने चाहिए जिससे कि उत्पादकता की भावना ह्रदय से उत्पन्न हो इसके लिए यह आवश्यक है। कि इस बात का पक्का आश्वसन दिया जाय कि उत्पादकता वृद्धि से जो लाभ में वृद्धि होगी उसका सभी सम्बन्ध पक्षो को न्यायसंगत वित्तरण किया जायेगा।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि केवल श्रमिको को ही उत्पादकता बढाने के लिए उत्तरदायी मानना उचित नही होगा। श्रम के अतिरिक्त तकनीकी पक्ष में सुधार करना भी उत्पादकता का एक आवश्यक अंग माना जाना चाहिए इसके लिए औद्योगिक अनुसंघान के स्तर को उन्नत करना होगा अनुसंघान के आधार पर ही वैज्ञानिक सुधार किए जाते है तथा उत्पादन की उन्नत तकनीकी को अपनाया जा सकता है।

उत्पादकता मे सुधार के उपायः–

उत्पादकता में सुधार के लिए तकनीकी वित्तीय प्रबन्धकीय एवं अन्य सभी प्रकार के उपाय काम मे लाये जा सकतें है जिन उपायों से उत्पादकता में सुधार किया जा सकता है। वे निम्नलिखित है :–

1 कारखाने में वैज्ञानिक प्रबंध के सिद्धांतों को लागू करना

2 किसी कार्य या प्रकिया को अधिक उत्तम ढंग से तथा अपेक्षाकृत कम समय में सम्पन्न करने के उद्देश्यो से ऐसी विधियां का विकास करना जो श्रम के कार्य समय एवं गति के अध्ययनो पर आधारित है।

3 उत्पादन की प्रकियाओ का सरलीकरण प्रमापीकरण तथा विशिष्टीकरण

4 ऐसी नियंत्रण तकनीको का क्रियान्वयन है। जो उत्पादन नियोजन नियंत्रण लागत नियन्त्रण की विधियो पर आधारित हो।

5 कारखाने केले आउट काम करने की दशाओं तथा पदार्थो के रख रखाव एवं उपयोग के वरीको में सुधार

6 मिल मालिको एवं श्रमिको में उचित सम्बन्धो की स्थापना की दिशा में निरंतर प्रयास एवं ऐसे सम्बन्ध जो औद्योगिक मानवीय आधारो पर स्थापित किए गयें हो

7 श्रमिको के लिए अतिरिक्त उत्प्रेरणाएं जैसे अधिक वेतन महँगाई भत्ते एवं बोनस तथा श्रम कल्याण के कार्य

8 श्रमिको के लिए उचित प्रशिक्षण व्यवस्था और उन्हें अधिक उत्तरदायित्व बनाने के उद्देश्य से प्रबंध कार्यो में उनका सहयोग तथा यदि सम्भव हो तो लाभ सहभागिता को योजनाओं को लागू करना।

9 औद्योगिक अनुसंघान की ओर अधिक ध्यान तथा उस पर अधिक व्यय अनुसंघान की परियोजनाएं औद्योगिक स्तर पर अथवा बडे प्रतिष्ठानां द्वारा उत्पादन इकाई स्तर पर अपनायी जा सकती है।

10 प्रबंध कुशलता मे सुधार के द्वारा भी उचित समन्वय के आधार पर उत्पादक्ता में सुधार लाया जा सकता है।

भारतीय श्रमिको की विशेषताएं–

भारत में औद्योगिक श्रमिक वर्ग का उदय ऐसी परिस्थातियों के अत्यत हुआ है। जो अन्य देशो से भिन्न है। इसलिए हमारे देश का श्रमिक कुछ निजी विशेषताएं रखता है। जो निम्नलिखित है –

1. अज्ञानता एवं अशिक्षा– भारतीय उद्यागो में कार्यरत ज्यादातर श्रमिक अशिक्षित होतें है। अशिक्षा के कारण श्रमिक उद्योगो की समस्याओं से अवगत नही हो पातें है एवं उन समस्याओं के निराकरण के लिए वे महत्वपूर्ण भूमिका भी नहीं निभा पातें है। अशिक्षा के कारण श्रमिको को सामाजिक शिक्षा एवं श्रम कल्याण से संबंधित कानूनों की जानकारी भी नही रहती अशिक्षा तथा अज्ञानता के कारण श्रमिक अकुशल भी होता है। उसको अपने कार्य के बारे में पर्याप्त प्रशिक्षण भी प्राप्त नही हो पाता है। जिससे उसे भावी पदोन्नति प्राप्त नही हो पाती है। और उसकी आय भी नही बढ पाती है।

2. एकता का अभाव – भारतीय औद्योगिक श्रम की एक मुख्य विशेषता यह है। कि यहाँ पर उद्योगो में काम करने वाले श्रमिक प्रायः दूर–दूर से आतें है। इस कारण मजदूरों का वर्ग एक ऐसा विचित समुदाय बन गया है। जिससे भिन्न भिन्न धर्मो के विभिन्न भाषाएं बोलने वाले विभिन्न रहन–सहन तथा रीति रिवाज के लोग होते है। अनेक विभिन्नतओ के कारण श्रमिक वर्ग में संगठन तो दूर आपसी मेल–जोल भी बहुत कम मात्रा में है इसके विपरीत इनमें विशेषता का प्रभाव उनके रहन–सहन शिक्षा मोलभाव करने की क्षमता और मजदूरी आदि पर पडे विना नही रह पाता

3. गतिशीलता में कमी – भारतीय श्रमिको की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह है। कि इनमे गतिशीलता का अभाव पाया जाता है। जन्म स्थान से विशेष अनुराग भाग्यवादिता अशिक्षा अज्ञानता भौगोलिक बाधाएं औद्योगिक की धीमी प्रगति विभिन्न भाषाएं तथा जातियां परिवहन एवं संदेश वाहन के साधनो की कमी महात्वाकांक्षा का अभाव और औद्योगिक केन्द्रो मे आवास की कठिनाइं आदि के कारण श्रमिक एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने को तैयार नही होते इस कारण हमारे देश में आवश्यकनुसार कुशल श्रम उपलब्ध नही हो पाता।

4. जागरूकता का अभाव – भारतीय श्रमिको के परंम्परावादी एवं रूढिवादी होने के कारण उनमे जागरूकता का अभाव पाया जाता है। शिक्षा का अभाव होने के परिणामस्वरूप श्रमिको को अपने अधिकारो का ज्ञान नही होता हौ और वे राजनीतिक के हाथ का खिलौने बन जातें है। जो अपने स्वार्थो की पूर्ति के लिए श्रमिको से अनुचित हडताल करवाकर अपने राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ती करते है तथा देश के आर्थिक विकास मे बाधा पहुॅचातें है।

5. भाग्यवादिता – भारतीय श्रमिको की एक अन्य विशेषता यह है कि ये बडे भाग्यवादी होते है अपने जीवन के सुख दुख को ये भाग्य की देन समझातें है। भाग्य में उनका इतना अधिक विश्वास है कि वे अपनी उन्नति का कोई प्रयत्न नही करतें बल्कि भाग्य में होगा तो मिल जायेगा यह सोचकार हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहतें है।

6. प्रवासी प्रवृत्ति – अधिकांशत श्रमिक गांव से नगरो मे काम करने आते है। भूमि पर बढती हुई जनसंख्या के भार अनार्थिक कृषि गॉव मे बेरोजगारी सामाजिक अयोग्यताएं सम्मिलित परिवार प्रथाएं महाजनो द्वारा शोषण आदि के कारण अनेक श्रमिक गाँव से शहरो की ओर आते है। परंतु गाव के वातावरण में पले होने के कारण ग्रामीण जीवन से ही इन्हे अनुराग होता है। अतः वे शीघ्र अवसर प्राप्त होने पर पूरे गॉव मे लौट आतें है। भारतीय श्रमिको की इस प्रवासी प्रवृत्ति के कारण उद्योगो की कार्यक्षमता तथा उत्पादकता पर गहरा प्रभाव पड़ता है एवं उन्हें काफी आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।

7. अनियमित उपस्थिति – कारखानो के निकटवर्ती गांवो अथवा राज्यो से काम करने के लिए नगरो मे आतें है। अतः अपने गाँव के प्रति उनका आर्कषण बना रहता है। वे समय समय पर गॉव जाते रहतें है। जिससे कारखानो के काम में बडी बाधा उत्पन्न होती है। काम की अनुपस्थिति से एक ओर तो श्रमिको का मजदूरी कम मिलती है मिल मालिको कोक विकल्प के रूप मे दूसरे मजदूर रखने पडतें हैं जिससे उनका न्यय बहुत अधिक बढ़ जाता है। और कभी कभी इन मजदूरो का अतिरिक्त रखे गयें मजदूरो से झगडा भी हो जाता है। इससे अनेक समस्याएं उत्पन्न हो जाती है।

8. रहन सहन का निम्न स्तर – भारतीय श्रमिको के रहन सहन का स्तर अत्यन्त गिरा हुआ है। इसका मुख्य करण यह है कि उनको मजदूरी उनके काम के मुकाबले कम मिलती हैं कोई व्यक्ति जब तक उसके पास अपनी समस्त आवश्यकता की पूर्ती के साधन न हो अपने रहन सहन का स्तर ऊंचा नही उठ सकता है। अतः यह विशेषता या दोष श्रमिको का नहीं वरन उन परिस्थितियो एवं वातावरण है। जिनमे पलकर वे बडे हुए है और अपना जीवन व्यतीत कर रहें है।

9. अन्य विशेषताएं– उपरोक्त विशेषताएं के अतिरिक्त भारतीय श्रमिको की कुछ अन्य विशेषताएं हैं जो निम्न प्रकार है।

श्रमिको में संगठन के अभाव के कारण सौदेबाजी की क्षमता कम हो जाती है। जिससे उद्योगपती उनका शोषण करतें हैं।

बेरोजगारी के कारण मजदूरी कम होतें हुए भी श्रम आपूर्ति ज्यादा मात्रा मे होती है।

श्रमिक अपने पैतृक व्यवसाय में लगे रहतें है। जिसमे अपने सृजनशीलता का अभाव पाया जाता है।

1. पंजीगत वस्तु उद्योगो तथा उपभोक्ता वस्तु उद्योगो का धीमा विस्तार – पूँजीगत वस्तुओं के विस्तार की गति जो द्वितीय योजनाविधि और तृतीय योजनाविधि में बहुत तेज थी 1966 से 1969 के दौरान मंद पड गयी बाद में विस्तार की गति में सीमांत वृद्धि हो पाई उपभोक्ता वस्तुओ उद्योगो की विकास दर भी नीची बनी रही जहाँ टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओ की विकास दर औसतन 7.7 प्रतिशत वार्षिक रही वही गैर टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओ की विकास दर मात्र 2.6 वार्षिक रही इससे कीमत स्तर मे स्फीतिक वृद्धि को प्रोत्साहन मिला है।

2. पूँजी निर्माण की नीची दर– पूँजी की न्यूनतम तथा पूँजी निर्माण की नीची दर औद्योगिककरण की धीमी गति का महत्वपूर्ण कारण है। देश में निर्धनता के कारण बचत का स्तर बहुत नीचा है। ग्रामीण क्षेत्रो की बचतो को एकत्रित करके गतिशील बनाने वाली वित्तीय संस्थाओं की कमी है संचित बचतो का उत्पादक निवेश करने की योग्यता रखने वाले उद्योमियो का भी अभाव है मुद्रा स्फीति और प्रदर्शन प्रभाव का देशवासियो की बचत क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

3. तेजी से बढती हुई जनसंख्या – देश मे जनसंख्या वृद्धि की ऊंची दर भी औद्योगिक विकास की गति उत्तरदायित्व रही है। जनसख्या की अधिकार की अधिकाता मशीनीकरण एवं स्वचालन के विस्तार में मुख्य बाधा है इसके कारण पूँजी निर्माण की दर नीची रही है

4. कच्चे माल का अभाव – बहुत से उद्योगो के लिए कच्चा माल विदेशो से आयात करना पड़ता है। देश के विभाजन के पश्चात सूती वस्त्र तथा पटसन उद्योग को विशेष कठिनाई का समाना करना पडता है क्योकि इनके कच्चे माल के प्रमुख क्षेत्र पाकिस्तान में चल गये आज भी हमें लम्बे रेशे की कपास और कच्ची जूट का आयात करना पड़ता है। क्योकि इनका घरेलू उत्पादन आवश्यकता से कम है।

5. अधिसंरचना का अभाव– नियोजन काल में विद्युत परिवहन कोयला सीमेण्ट आदि आधारभूत अधिसंरचना की अपर्याप्तता ने विजली की भारी कटौती तथा परिवहन सम्बन्धी रूकावटो को जन्म देकर औधोगिक विकास की गति धीमी बनायी रक्खी है। लोहा एवं इस्पात तथा विद्युत खरीदो आधारभूत उद्योगो का तेजी से विकास नही हो पाया है। इसी प्रकार विधुत सृजन की विकास दर उससे बहुत नीची रही है। जो औद्योगीकरण का विस्तृत कार्यक्रम लागू करने की आवश्यकता थी।

6. योग्य उद्यमियों एवं प्रबंधको का अभाव – भारत में गिने चूने उद्यमियो ने ही प्रवर्तन का कार्य किया है। अभी तक उद्यमशीलता का वांछनीय विकास नही हो पाया है। अकुशल प्रबंधन के कारण अनेक औद्योगिक इकाईयॉ रूण हो गई है।

7. कुशल एवं प्रशिक्षित श्रमिको का अभाव – भारत में गिने चुने उद्यमियों ने ही मशीनीकृत औद्योगिककरण के लिए कुशल एवं प्रशिक्षित श्रमशक्ति की आवश्यकता होती है। भारत में शिक्षा के निम्न स्तर तथा प्रशिक्षण सुविधाओं के न्यूनतम के कारण ऐसी श्रमशक्ति का अभाव खटकता है। अधिकाशं औद्योगिक श्रमिक अशिक्षित एवं अकुशल है।

8. सार्वजनिक क्षेत्र में वाछंनीय कुशलता का अभाव– निःसदेह स्वतंत्र भारत में सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार तेजी से हुआ है। किंतु सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग में वांछनीय कुशलता का अभाव पाया जाता है। अधिकांश सार्वजनिक उद्योग निरंतर घाटे मे चले जा रहें है।

9 तकनीकी ज्ञान में पूर्ण आधुनिकता का अभाव– अधिकांश उद्योग में आज भी परम्परागत तकनीकी का प्रयोग किया जाता है। कुछ उद्योग आयातित तकनीक का प्रयोग कर रहें है। अभाव तकनीकी सुधार में मुख्य बाधा है। स्थानीय परिस्थितयों के लिए उपयुक्त तकनीक का अभी तक विकास नही हो पाया है।

10. अन्य कारण – अलाभप्रद प्रशासन मूल्य खराब औद्योगिक सम्बध श्रमिको की प्रवासी प्रकृति उद्योग मे अनुपस्थितता एवं श्रम परिवर्तन की ऊंची दर दोष पूर्ण अनुज्ञापन नीति आदि कारणो से भी औद्योगिक विकास की दर नीची है।

इकाई–2

औद्योगीकरण का आधुनिक युग

औद्योगीकरण आधुनिक युग का मौलिक आधार है। यही कारण है कि आधुनिक युग औद्योगिक युग का प्रतीक बन गया है। आज विश्व के प्रायः समस्त देश औद्योगीकरण की ओर अग्रसर हो रहें है। क्योकि औद्योगीकरण किसी राष्ट्र की प्रगति एवं संपन्नता का केवल आधार ही नहीं बल्कि उसके आर्थिक विकास का मापदण्ड भी माना जाता है। विश्व की श्रेणी मे गिने जाते है। इसके अतिरिक्त जो राष्ट्र अभी विकसित राष्ट्रो की श्रेणी में नहीं गिने जाते है। इसके अतिरिक्त जो राष्ट्र अभी विकसित राष्ट्रो की श्रेणी में नहीं गिने जाते है। किंतु विकास के पथ पर आगे बढ़ चुके है। वे सब औद्योगिक करण के द्वारा ही अपने आर्थिक विकास के लिए प्रयत्नशील रहे है। पिछले चार दशको में अनेको विकासशील राष्ट्रो के लिए द्वारा औद्योगिक की दिशा में पर्याप्त प्रगति भी की गयी है। वस्तुतः औद्यागीकरण आर्थिक एवं सामाजिक विषमताओ से ग्रसित अनेको पिछडे हुए राष्ट्रो के नव निर्माण के लिए आशा की एक ऐसी किरण के समान है। जो उन्हे अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाती है।

औद्योगीकरण आर्थिक विकास की एक ऐसी प्रक्रिया है। जो किसी परंपरागत अर्थव्यवस्था मे व्यापत अवरोध को समाप्त करके किसी राष्ट्र की आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति को नयी दिशाए प्रदान करती है श्री बाइस के अनुसार विकास के किसी भी सुद्रढ कार्यक्रम मे औद्योगिक विकास को अनिवार्यतः एवं अन्तत एक व्यापक भूमिका का निर्वाह करता होता है। यदि कोई राष्ट्र निर्धनता को दूर करके करना होता है। आर्थिक स्थिरता लाना चाहता है तो उसके लिए औद्योगिक करण को रामबाण औषधि माना जा सकता है व्यापक रूप में औद्योगिकरण आर्थिक प्रगति एवं ऊंचे जीवनयापन के स्तर की कुंजी है।

औद्योगीकरण की परिभाषा :–

औद्योगीकरण वह प्रकिया है। जिसके अंतर्गत किसी देश की आर्थिक व्यवस्था मे यंत्रीकरण के द्वारा ऐसे आधार भूत परिवर्तन किए जाते है।

पी.काग. चाग के अनुसार – औद्योगीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है। जिसके अंतर्गत महत्वपूर्ण उत्पादन कार्यों में परिवर्तनो की एक श्रृंखला का जन्म होता है। इस प्रक्रिया के अर्तःगत वे समस्त परिवर्तन सम्मिलित होतें है। जो किसी उपक्रम के मशीनीकरण किसी नवीन उद्योग की स्थापना किसी नये बाजार में प्रवेश तथा किसी नये प्रदेश के विवोहन के फलस्वरूप घटित होते है। यह एक प्रकार से यह एक ऐसी प्रकिया है। जो पूँजी को गहनता से नही प्रदान करती है। बल्कि उसे व्यापकता भी प्रदान करती है

प्रोफेसर हेनरी जोन्सन के शब्दों में – औद्योगीकरण का आशय उन व्यवसायिक उपक्रमो के उत्पादन संगठन से है। जिनमें उपक्रम के अंदर एवं विभिन्न उपक्रमो के मध्य श्रम विभाजन और विशिष्टी अपनाया गया हो तथा ऐसे विशिष्टीकरण का आधार मानवीय प्रयास के स्थान पर अथवा उनके अनुपूरक के रूप मे यांत्रिक तथा विद्युत शक्ति के उपयोग

में तो और जो प्रति इकाई लागत को न्यूनतम एवं उपक्रम के लाभो को अधिकतम करने के उद्देश्य से प्रेरित हो।

उद्योग राष्ट्र की व्याख्याः – भारतीय औद्योगीकरण विवाद अधिनियम की धारा मे उद्योग की परिभाषा निम्न शब्दो मे दी गयी है उद्योग का आशय किसी ऐसे व्यवसाय व्यापार उपक्रम निर्माण अथवा नियोजको के बुलाने से है। जिसके अंतर्गत श्रमिको द्वारा किसी सेवा रोजगार शिल्प अभियाचन औद्योगीकरण धंधे अथवा उप व्यवसाय का समावेश हो इस व्याख्या के अनुसार उद्योग के दो आवश्यक पक्ष माने गयें हें पहला पक्ष उद्योग के संस्थापन स्वरूप तथा दूसरा पक्ष उद्योग के क्रियात्मक स्वरूप ओर ध्यान आर्कषित करता है। इस प्रकार इस व्यवस्था में पूँजी तथा श्रम का सहयोग आवश्यक रूप से निहित है किन्तु इसमें ध्यान देने योग्य तथ्य यह है। कि ऐसी औद्योगीकरण गतिविधि आकस्मिक अथवा मनोरंजानार्थ न होकर व्यवस्थित रूप में तथा स्व भावत संचालित की जानी चाहिए

औद्योगीकरण के स्वरूप :–

पिछली दो शताब्दियो के औद्योगीकरण का इतिहास यह इंगित करता है। कि विभिन्न देशो में हुए औद्योगीकरण के स्वरूप में समानता नही रही हैं प्रत्येक देश ने अपनी स्थानीय परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए औद्योगीकरण का एक ऐसा स्वरूप अपनाया गया है। जो उस देश उस देश की तात्कालिक आवश्यकताओं के संदर्भ में सर्वोत्तम सिद्ध हो सके औद्योगीकरण के स्वरूप अथवा प्रकारो का वर्गीकरण विभिन्न आधारो पर किया जा सकता है। जिसका वर्णन पंक्तियो मे किया गया हैं :–

पूँजी के स्वामित्व के आधार पर– जहाँ तक स्वामित्व का प्रश्न है औद्योगीकरण के अनेक स्वरूप हो सकतें है। जैसे :–

- निजी क्षेत्र
- राजकीय अथवा सार्वजनिक क्षेत्र
- संयुक्त क्षेत्र
- सहकारी क्षेत्र

निजी क्षेत्र मे औद्योगीकरण व्यक्तियो तथा व्यक्तियां के समूह के उद्यम का परिणाम होता है। एवं उन्ही के स्वामित्व एवं नियंत्रण में उद्योग संचलित होतें है। अधिकांश पूँजीवादी देशो जैसे ब्रिटेन संयुक्त राज्य अमेरिका जर्मनी मे निजी उद्यमकर्ताओं के द्वारा ही औद्योगीकरण का प्रारंभ एवं विकास हुआ इसके विपरीत राजकीय अथवा सार्वजानिक क्षेत्र मे राज्य सक्रिय उद्यमकर्ता के रूप मे उद्योगो की स्थापना एवं उनके विकास से प्रमुख भूमिका अदा करता है। साम्यवादी एवं समाजवादी देशो मे औद्योगिकरण का प्रायः यही स्वरूप देखने में आता है। तथा इन देशो मे अधिकांश उद्योग सार्वजनिक क्षेत्र में ही विकसित किये गयें हैं संयुक्त क्षेत्र निजी स्वामित्व एवं राजकीय स्वामित्व का एक मिला जुला संस्करण है। जिसके अन्तर्गत उद्योग के स्वामित्व के प्रमुख भाग राज्य का ही होता है। किंतु निजी क्षेत्र को भी प्रमुख भाग राज्य का ही होता है। किंतु निजी क्षेत्र में उद्योगो का विकास व्यक्तियो के पारस्परिक सहयोग के आधार पर किया जाता है। भारत मे शक्कर सहकारी मिलो की स्थापना इसका प्रमुख उदाहरण हैं यद्यपि अन्य कोई उद्योगो में भी सहाकारी स्वरूप मिलता

है। जैसे कृषि प्रदार्थो का परिकरण डेयरी उद्योग लधु उद्योग आदि डेनमार्क हालैण्ड इंग्लैड फ्रांस जैसे विकसित देशो में भी अनेक उद्योग सहकारी क्षेत्र में संचालित किए जाते है।

2. विकास की गति की तीव्रता के आधार पर– परम्परागत औद्योगिक व्यवस्था में जब परिवर्तन की श्रृंखला आरंभ की जाती है। तो अर्थ व्यवस्था के प्राय सभी अंग उससे प्रभावित होते है। परिवर्तनो का यह काम यदि स्वभाविक गति से एक लंबी अवधि में पूरा होता है तो ऐसे औद्योगिक विकास का स्वरूप विकासात्मक कहा जाता है। इंग्लैण्ड जर्मनी संयुक्त राज्य अमेरिका जापान आदि देशो मे औद्योगीकरण का स्वरूप विकासात्मक ही रहा है इसके विपरीत यदि ये परिवर्तन एक पूर्व नियोजित एवं सुनिश्चित नीति के अन्तर्गत अति शीघ्रता से थोडी अवधि में ही लाये जाते हे। तो ऐसे औद्योगिक विकास का स्परूप क्रांतिकारी होता है। सोवियत रूस चीन एवं पूर्वी यूरोप के रूतिपय देशो मे औद्योगिक करण का प्रारंभ क्रांतिकारी ढंग से ही हुआ है।

3 पूँजी एवं श्रम की गहनता के आधार पर – औद्योगीकरण का स्वरूप पूँजी एवं श्रम परक हो सकता है। कुछ उद्योग स्वभावत ही पूँजी परक होते है। और इसमे भारी पूँजी का विनियोग आवश्यकता होती है। राष्ट्र के आर्थिक हित को देखतें हुए यह आवश्यक होता है कि पूँजी परक एवं श्रम परक दोनो ही प्रकार के उद्योगो का संतुलित विकास देश में किया जाय कितु यहॉ प्रश्न उत्पन्न होता है। कि किस को अधिक प्राथमिकता दी जाय अनेक विकासशील देश एक ओर पूँजी की कमी तथा दूसरी ओर जनसंख्या क आधिक्य से ग्रसित है। अतः ऐसे देशो द्वारा श्रम परक उद्योगो के विकास को प्राथमिकता दे नही होगी ताकि अपेक्षाकृत कम पूँजी का विनियोग करके भी अधिक से अधिक व्यक्तियो को रोजगार प्रदान किया जा सके।

4 स्थानीयकरण के आधार पर – स्थानीयकरण के अनुसार औद्योगीकरण के स्वरूप का वर्गीकरण जिन दो वर्गों में किया जाता है। वे है केन्द्रीय औद्योगीकरण तथा विकेन्द्रीत औद्योगीकरण प्रारंभ में उद्योगो का केन्द्रीयकरण उन स्थानो पर अधिक होता है। जहाँ उद्योग का केन्द्रीय करण उन स्थानो पर अधिक होता है। जहाँ उद्योगो के स्थानीकरण की सुविधाएं सबसे अधिक होती है। उस उद्योग की नवीन इकाइयों भी इन सुविधाओं का लाभ उठाने के लिए उन्ही केन्द्रीकरण है। किंतु एक सीमा के बाद सुतुप्त विदुन्आ जाता है और फिर नवीन इकाईयो ऐसे स्थानो पर स्थापित करना लाभदायक नही होता है। अतः उद्योगो के विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है। देशो को कुछ की दृष्टि से उचित नही कहा जा सकता है अतः चाहिए जिससे कि कालांतर में देश के सभी क्षेत्रो का संतुलित औद्योगिक विकास सम्भव हो सके।

5 आकार के आधार पर– यहॉ यह प्रश्न उठता है। कि आकार का मापदण्ड क्या हो क्या विनियोजित पंजी का किसी उद्योग के आकार का पैमाना माना जाय अथवा उस उद्योग द्वारा उत्पादित माल या उस उद्योग में संलग्न श्रमिको की संख्या को इसका आधार माना जाय इस बारे में पर्याप्त मतभेद है। और प्राय विनियोजित पूजी के आधार पर ही किसी उद्योग के आकार का अनुमान लगाया जाता हैं आकार के अनुसार उद्योग चार भागो में विभक्त किये जातें हैं :–

क. भारी एवं आधारभूत उद्योग

ख मध्यम आकार के उद्योग

ग. लघु उद्योग

घ कुटीर उद्योग

चाहे राष्ट्र विकसित हो अथवा विकासशील हो उसमें औद्योगीकरण का स्वरूप इस प्रकार निर्धारित किया जाना चाहिए कि जिससे आकार के अनुसार वर्गीकृत इन सभी उद्योग का समन्वित विकास किया जा सके।

6 उत्पादित माल के आधार पर – कतिपय उद्योग उपभोक्ता वस्तुओं का निर्माण करतें है। जिन्हे उपभोक्ता उद्योगो के नाम से संबोधित किया जाता है। इसके विपरीत कुछ अन्य उद्योग के नाम से संबोधित किया जाता है। इसके विपरीत कुछ अन्य उद्योग की संज्ञा प्रदान की जाती है। कपडा शक्कर जूट चमडा चाय कॉफी तम्बाकू खाद्य तेंल आदि उद्योगक प्रथम वर्ग में लोहा इस्पात कल पुर्जे इजीनियरिंग सीमेण्ट भारी रसायन भारी विद्युत आदि उद्योग पूंजीगत उद्योगो की श्रेणी में सम्मिलित किए जातें है।

औद्योगीकरण की गति–

औद्योगिकरण के स्वरूप की भांति ही औद्योगीकरण की गति भी विभिन्न देशो में समान नही है। रही है। जबकि कतिपय अन्य राष्ट्रो से औद्योगीकारण तीव्र गति से आगे बढा औद्योगीकरण की गति अनेक कारणो पर आगे बढ़ा है। जिनका विवरण नीचे किया गया है।

1 मानवीय साधन – औद्योगीकरण केवल यंत्रीकरण से ही संभव नहीं होता है। यंत्रीकरण भी अन्तत भारतीय गुणो एवं दक्षताओं का परिणाम होता है। प्रो० आर्थर लेविस का कथन है कि आर्थिक विकास मानवीय प्रयत्नो का प्रतिफल होता है। उसी प्रकार प्रोफेसर इंगर नक्से क शब्दो में मानवीय भावनाओं सामाजिक दृष्टि कोणो राजनीतिक दशाओं एवं ऐतिहासिक दुर्घटनाओं का आर्थिक विकास से घनिष्ठ सम्बन्ध है। सम्भव नही होता है। जबकि उच्च स्तर के मानवीय साधनो का सहयोग न मिले

2 राजकीय नीति – सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार सरकारी पहल राजकीय संरक्षण एवं सहायता की नीति औद्योगीकरणा की गति को बढ़ा देती है। मूल्य नीति प्रशुल्क नीति व्यापार नीति कर नीति आदि नीतियां सरकार द्वारा इस प्रकार ढाली जा सकती है। जिससे कि औद्योगीकरण को प्रोत्साहन मिले समाजवादी देशो में सरकार स्वयं उद्योगो की स्थापना एवं उन्नति में पहल करती है तथा एक सक्रिय उद्यमकर्ता की भूमिका अदा करती है। उपलब्ध अधिकांश साधनो को भारी औद्योगीकरण में लगा दिया जाता है।

3 जनससधारण का आधार एवं घनत्व– घने आवाद तथा जनसंख्या वृद्धि की उची दर वाले देशो में औद्योगीकरण की गति धीमी होती है। इसके विपरीत ऐसे देशो में जहां जनसंख्या का घनत्व कम हे तथा जनसंख्या वृद्धि की दर उची नही है। औद्योगीकारण की गति में तीव्रता लायी जा सकती ह। तथा जनसंख्या का व्यवसायिक ऊँचा तेजी से बदला जा सकता है।

4 प्रकिया का प्रारम्भिक स्वरूप – यदि औद्योगिककरण की प्रक्रिया का प्रारंभ उपभोक्ता उद्योगो की बाजाय उत्पादन उद्योगो के आधार पर किया जाता है। तो निश्चय ही औद्योगिककरण की गति इन आर्थिक नियोजक की नीति अपनायी गयी तब तीन पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में उपलब्ध साधनो में तीन चौथाई भाग का विनियोग उत्पादक अथवा पूँजी गत उधागो की स्थापना एवं विकास पर किया गया।

5 विदेशी सहायता एवं सहयोगः– ऐसे कुछ देशो को छोडकर यहा औद्योगीकरण में पहल की गयी प्राय सभी देशो में विदेशी आर्थिक सहायता एवं तकनीकी सहयोग के बल पर औद्योगीकरण की गति को तीव्र किया गया है। अतः औद्योगीकरण की गति को तीव्र किया गया है। अतः औद्योगीकरण की गति इस तथ्य पर निर्भर रही है कि उन राष्ट्रो का विदेशी सहयोग कितनी मात्रा में प्राप्त हुआ है।

7 सामाजिक व्यवस्था– औद्योगिक की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाने के बाद प्राय सभी सामाजिक व्यवस्थाओं में बदलाव आता है। किंतु महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि यह बदलाव कितनी तीव्रता से आता है।

औद्योगीकरण से लाभ–

औद्योगीकरण समस्त राष्ट्र के लिए लाभदायक होता क्योकि यह पूँजी के नये साधनो को उत्पन्न करेगा पूंजी की बचत को बढावा देगा सरकार की आय की बचत को बढावा देगा सरकार की आय में वृद्धि करेगा श्रमिको को जीविका प्रदान कर सकेगा कृषि के अनिश्चित लाभों पर राष्ट्र की अत्यधिक निभ्ररता में कमी करेगी और राष्ट्रीय जीवन के लिए प्रेरणा प्रदान करेगा योजना आयोग ने भी औद्योगीकरण विकास के महत्व को निम्न शब्दो मे व्यक्त किया जाता है। औद्योगिक विकास हमारे विकास की यह रचना मे संरचनात्मक विविधिकरण आधुनिकीकरण एवं स्वावलम्बन के उद्देश्यो की पूर्ति में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। संक्षेप में औद्योगीकरण से निम्नलिखित लाभ प्राप्त होतें है।

1 भूमि पर जनसंख्या के भार में कमी– कृषि प्रधान देशो में जनसंख्या का अधिक भाग कृषि मे लगा होता है। यह प्रतिशत 50 प्रतिशत और इससे भी अधिक होता है। जबकि प्रोद्योगिकी के अभाव में कृषि के परम्परागत स्वरूप मे उत्पादकता अत्यन्त न्यून होती है। यह स्थिति महज मजदूरी या विवसता का परिणाम होती है। क्योकि लोगो के समक्ष अन्य कोई विकल्प नही होता और वे जैसे तैसे कृषि से चिपके रहतें हे। भले ही वहा इतने अधिक व्यक्ति की आवश्यकता न हो।

2 कृषि का विकास – स्वयं कृषि के विकास के लिए भी औद्योगीकरण की आवश्कयता होती है। कृषि का वैज्ञानिक करण आधुनीकारण एवं मशीनीकरण वस्तुत औद्योगीकरण की प्रक्रिया का ही महत्वपूर्ण अंग है। अनेक अर्थशास्त्री तो कृषि को एक उद्योग ही मानतें उदाहरण के लिए प्रोफेसर रेगनर नक्सी तथा प्रोफेसर विलियम आधर लुइस की यह मान्यता है कि संतुलित विकास की संरचना में कृषि को उद्योग की माना जाना चाहिए अतः अर्थव्यवस्था को संतुलित बनाए रखने के लिए आद्योगीकरण अनिवार्य हो जाता है।

3 राष्ट्र आय में वृद्धि – औद्योगीकरण से न केवल राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है। बल्कि प्रतिव्यक्ति आय में वृद्वि की जा सकती है। उचित जनसंख्या नीति का पालन किया जाय

इनके द्वारा जनसाधारण का जीवन स्तर ऊँचा उठाया जा सकता है। अब प्रायः सभी इस तथ्य को स्वीकार करतें है कि जबकि कोई राष्ट कृषि प्रधान रहता है। अथवा प्राथमिक व्यवसायो पर निर्भर रहता है। तब तक वहाँ के लोगो के जीवन स्तर में वृद्धि करना।

4 पूंजी एवं श्रम की गतिशीलता – यदि उद्योगो का क्षेत्रीय वित्तरण संतुलित रूप से हो तो औद्योगिकरण पूंजी एवं श्रम की गतिशीलता में वृद्धि करता है लाखो व्यक्ति एक राज्य से दूसरे राज्य में काम की खोज में आने जाने लगतें है। इसी प्रकार किसी भी राज्य में स्थानीयकृत उद्योग देश के समस्त क्षेत्रो से पजी आर्कषित करतें है। यही नहीं विदेशो से भी औद्योगिक विकास के लिए पूंजी उपलब्ध होने लगती है।

बहुमुखी 5 देश का संतुलित एवं बहुमुखी विकास विकास – किसी देश के आर्थिक संगठन में तभी सुधार किया जा सकता है। जबकि यहॉ सभी क्षेत्रो में संतुलित रूप से प्रगति की जाय औधोगीकरण नवीन उद्योगो एवं व्यवसायो को जन्म देता है और इस प्रकार राष्ट्र का संतुलित एवं सर्वतीन्मुखी विकास हो सकता है। विकास के किसी भी सुद्रढ कार्यक्रम में औद्योगीक विकास के किसी भी सुद्रढ कार्यक्रम में औद्योगिक विकास को अनिश्चित एवं अन्ततोगप्वा एक महान भूमिका का निर्वाह करना होता है।

6 बेरोजगारी को दूर करने में सहायक – औद्योगीकृत राष्ट्रो में करोडो व्यक्ति बेरोजगारी अथवा अर्द्ध रोजगारी की दिशा में जीवन व्यतीत कर रहें है। उद्योग का विकास इन लोगो को रोजगार के नये अवसर प्रदान करता है। और इस प्रकार उत्पन्न एवं प्रत्यक्ष बेरोजगारी को दूर करने में सहायक सिद्ध होता है।

आवश्यकता अविस्कार की जननी है। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उत्पादन करना अनिवार्य है। अर्थशास्त्रियो के अनुसार उत्पादन के लिए पॉच तत्व अनिवार्य है।

- भूमि
- श्रम
- पूंजी
- संगठन
- साहस

1 प्रसिद्ध समाजवादी विचारक फेडिरक एजिल्स का विचार है कि श्रम की वह साधन है। जिसके माध्यम से उत्पादन किया जा सकता है। प्रकृति एवं एक दूसरे के अंत संबधित है। उत्पादन में प्रकृति एवं श्रम एक दूसरे के अतः संबंधित है। उत्पादन आधार है। जिसके माध्यम से उत्पादन किया जा सकता है। प्रकृति के बाद श्रम का स्थान आता है। प्रकृति के माध्यम से ही श्रम को समाग्री प्राप्त होती है। श्रम के द्वारा ही प्रकृति को घन कें रूप में परिवर्तन किया जाता है।

श्रम की परिभाषा–

1 जेवन्स के अनुसार – श्रम मस्तिक अथवा शरीर का वह प्रयास है। जो उस कार्य से प्राप्त होने वाले प्रत्यक्ष सुख के अतिरिक्त पूर्णत या अशत किसी लाभ के लिए किया जायें

2 थॉमस के अनुसार – श्रम से शरीर व मस्तिक के उन समस्त मानवीय प्रयासो का बोध होता है। जोकि परिश्रमिक पाने की आशा से किया जायें

श्रम की विशेषताएं–

1 श्रम की कार्यकुशलता में वृद्धि की जाती है।

2 श्रम उत्पत्ति का आधार है। श्रम के अभाव में उत्पत्ति की कल्पना नही की जा सकती है।

3 श्रम में गतिशीलता का तत्व पाया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि श्रम का एक स्थान से दूसरे स्थान को हस्तान्तरण किया जा सकता है।

4 श्रम नाशवान है। इसे संचित करके नही रखा जा सकता है। इसका यह कारण है। कि बीता हुआ दिन वापस नही आता है।

5 श्रम बेचा जा सकता है। किंतु इसका तात्पर्य यह कदापि नही है कि श्रमिक अपने गुणो को बेचता है। वह तो सिर्फ अपने श्रम को ही बेचता है।

6 श्रम का श्रमिक से धनिष्ठ सम्बंध है। इन्हें प्रथक किया जा सकता है। इस प्रकार श्रम और श्रमिक एक ही गाढी के दो पहलू है।

7 श्रमिक की कार्यकुशलता एक ही प्रकार की न होकर इसमें भिन्नता होती है।

8 श्रमिक उत्पादन का साधन ही नही है। अपितु साहय भी है। श्रमिक केवल उत्पादन ही नही करता अपितु उपभोग मे भी हिस्सा बॉटता है।

9 श्रम का तात्पर्य मानवीय प्रयासो से है। ये मानवीय प्रयास दो भागो मे विभाजित होते है।

- शारीरिक
- मानसिक गुली में

10. श्रम मे सौदा करने की शक्ति अत्यन्त की न्यून मात्रा में होती है। श्रमिको की सौदा करने की दुर्वनशक्ति के निम्न कारण है।

- श्रम नश्वर होने के कारण श्रमिक इसका संचय न करके तुंरत बेचता है।
- श्रमिको में व्यापत दरिद्रता और निधरता
- श्रमिको की अज्ञानता अशिक्षा और अनुभवहीनता
- श्रम संगठनो का अभाव एवं उनकी शिथिलता
- बेरोजागारी

श्रम समस्या का अर्थ–

श्रम समस्या अत्यन्त ही व्यापक शब्द है इसके अंतर्गत श्रमिको के भर्ती की समस्या से लेकर उत्पादन वृद्वि तक की समस्याओं को सम्मिलित किया जाता है। श्रम समस्या के

अंतर्गत श्रमिको की प्रमुख समस्याओं को सम्मिलित किया जाता है। एउम्स और समार ने लिखा है। कि श्रम का क्षेत्र अत्यन्त ही विशाल और इसके अतःर्गत श्रम संघवाद तथा औधोगीकरण शांति से सम्बन्धित समस्याओ को सम्मिलित किया जाता है। श्रम समस्या का इसलिए भी अधिक महत्व है कि यह एक मानव तत्व है। मानवीय तत्व होने के कारण है कि यह एक मानव तत्व है। मानवीय तत्व होने के कारण ही इससे संबंधित अनेक समस्याओं का जन्म होता है। आधुनिक औद्योगिक जीवन में श्रम समस्याओं की गई अतःयंन्त ही गहरी जा चुकी है।

श्रम समस्याओ के कारण–

श्रम समस्या इसलिए अधिक जटिलता की ओर अग्रसर होती है। कि इसका सम्बंध मानवीय तत्व से है। संक्षेप में श्रम समस्याएं को जन्म देने और विकसित करने मे जो प्रमुख कारक हैं उन्हे निम्नलिखित भागो मे विभाजित किया जा सकता है

1. पूंजीवाद अर्थव्यवस्था– सामाजिक कारक भी श्रम समस्याओं को जन्म देतें है। औद्योगिक अर्थव्यवस्था मे कुटीर उद्योग समाप्त हो जातें है। विशाल उद्योगो की स्थापना हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है। कि औद्योगिक पूजी का केन्द्रीकरण होता जाता है और समाज अपना संतुलन खो देता है। इसका परिणम यह होता है। कि अनेक प्रकार की समस्याओं का जन्म होता है।

2. पूंजीवाद अर्थव्यवस्था– वैसे तो प्रत्येक स्तर की अर्थव्यवस्था में कुछ न कुछ समस्याएं विद्यमान थी किन्तु श्रम समस्याओं का जो अध्ययन आधुनिक युग में किया जाता है। उसका सीधा सम्बन्ध अर्थव्यवस्था से है। इस प्रकार की अर्थव्यवस्था में समाज स्पष्ट रूप से दो भागो मे विभाजित हो जाता है।

अ. पूंजीपति

ब. श्रमिक

3 मनोवैज्ञानिक कारण– मनोवैज्ञानिक कारक भी श्रम समस्याओं को जन्म देते है। श्रमिक मानव पहले है। और श्रमिक बाद मे हैं वह सामाजिक प्राणी है। समाज में भोजन और वस्त्र की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएं होती है। वह समाज में रहकर सम्मान और प्रतिष्ठा पाना चाहता है तथा समाज में एक निश्चित इज्जत की आकांक्षा करता है अनेक समस्याएं इसलिए पैदा हा सकती है कि मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जा सकता है।

4 राजनैतिक व्यवस्था – श्रम समस्याओं के जन्म और विकास में राजनैतिक व्यवस्था की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। और इसी व्यवस्था के परिणाम स्वरूप श्रम समस्याएं विकसित होती है। तानाशाही अर्थव्यवस्था में मालिक और शासको के बीच अतः सम्बध होते है। परिणाम स्वरूप मालिक श्रमिको को थोडी सी भी सुविधा नही देना चाहतें है। इसका परिणाम यह होता है कि इससे अनेक समस्याओं का जन्म होता है।

श्रम समस्याओं के अध्ययन का महत्व–

आधुनिक युग में श्रम समस्याओं का अध्ययन कार्यों किया जाता है। संक्षेप में श्रमिको में श्रमिको की समस्याओं के अध्ययन का जो महत्व है। उसे निम्नलिखित भागो में विभाजित किया जाता है –

श्रम समस्याओं के माध्यम से ही हमे किसी देश की वास्तविक स्थिति का ज्ञान होता है। और अंत में समाजवादी समाज की स्थापना के लिए भी श्रमिकों की समस्याओ के सम्बध में जानकारी रखना आवश्यकता है।

श्रमिक एक मानव होता हैं मानव होने के उसकी समस्याओ का अध्ययन आवश्यक है।

किसी भी देश की आर्थिक प्रगति और विकास के लिए श्रम समस्याओं का अध्ययन अनिवार्य है।

आधुनिक युग में औद्योगीकरण में निरंतर वृद्वि होती जा रही है। औद्योगिकरण अनेक समस्याओं को जन्म देता है। ये समस्याएं मानव जीवन से संबंधित है।

प्रत्येक देश का कर्तव्य है कि वह प्रत्येक नागरिक को आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान करे श्रमिक आर्थिक स्वतंत्रता तब तक प्रदान नही की जा सकती है। जब तक कि देश का औद्योगिक विकास न हो

भारतीय श्रमिको की प्रमुख समस्याएं–

प्रत्येक विकसित और अविकसित देशो में कुछ न कुछ समस्याएं होती है। भारत में अनेक प्रकार की समस्याएं है। इन समस्याओं में श्रमिको की समस्या भी एक है। श्रमिको को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं में श्रमिको की समस्या भी एक है। श्रमिको को अनेक समस्याओं के कारण श्रमिको की शारीरिक और मानसिक क्षमता का हास होता है। कार्यक्षमता की कमी चाहे शारीरिक हो या मानसिक उत्पादन को प्रभावित्त करती है। इससे उत्पादन में कमी आने से देश के विकास की गति धीमी होती जाती है। भारत वर्ष के श्रमिकों की प्रमुख समस्याएं को निम्न भागो में बाँटा जा सकता है–

1 ऋणग्रस्तता की समस्या – भारतीय श्रमिको की सबसे बड़ी समस्या ऋणग्रस्तता की है। जो मजदूरो की कार्यक्षमता से कमी और उनके जीवन स्तर का सबसे प्रधानकारण है। शाही श्रम आयोग ने अपने अध्ययन में पाया है। कि औद्योगिक क्षेत्रो के 3–4 श्रमिक ऋणग्रस्त है। औद्योगिक केन्द्रो मे श्रमिको मे पायें जाने वाली ऋणग्रस्त के अनेक कारण है ऋणग्रस्त का श्रमिको के जीवन पर निम्न कुप्रभाव पड़ता है।

- श्रमिको की कार्यकुशलता का ह्यस होता है।
- श्रमिको में आत्मसम्मान की भावना का लाभ होता है।
- वर्ग संघर्ष की भावना का जन्म होता है।
- श्रमिको के नैतिक चरित्र में गिरावट आती है।
- ऋणग्रस्तता में श्रमिको के जीवन स्तर में निंरतर गिरावट होती रहती है।

- ऋणग्रस्तता के परिणात्मक स्वरूप श्रमिको की समस्त अभिलाषाओ का विनाश होता है।

अनुपस्थितता– अनुपस्थितता भारतीय श्रमिको की मौलिक विशेषता है। अनुपस्थितता का अर्थ है। निर्धारित समय पर काम पर उपस्थित न होना अनुस्थितता से श्रमिको को निम्न हानि उठानी पड़ती है।

- इससे परिवार को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पडता है।
- इससे श्रमिको को आर्थिक हानि होती है।
- इस प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप श्रमिको और मालिकों के बीच में संघर्ष की स्थिति का जन्म और विकास होता है।
- अनुपस्थित रहने से श्रमिको में अनुशासन हीनता की प्रवृत्ति का विकास होता है। जिससे उनकी उन्नति मे बाधा उत्पन्न होती है।

3. स्वास्थ्य की समस्याएं – श्रमिक की अन्य समस्याएं की तुलना में स्वास्थ्य की समस्या अधिक महत्वपूर्ण है। आज का अत्यन्त की दैयनीय परिस्थितियों में कार्य करना पडता है। श्रमिको की स्वास्थ्य से संबंधित प्रमुख समस्याएं है।

- कार्यस्थल का दोषपूर्ण वातावरण
- आवास की कमी
- हानिकारक प्रदार्थो का प्रयोग
- चिकित्सा सुविधाओं का अभाव

4 काम करने के अधिक घंटे – काम करने के अधिक घंटे भारतीय श्रमिको की अगली महत्वपूर्ण समस्या है। काम के घण्टो मे अधिक्ता के कारण श्रमिको को निम्न समस्याओ का सामना करना पडता है।

- सामाजिक जीवन के कार्यों की उपेक्षा
- कार्यक्षमता मे कमी
- स्वास्थ्य में गिरावट

5 मजदूरो के नैतिक पतन की समस्या– इस समस्या के अंतर्गत मुख्य रूप से निम्न समस्याएं आती है।

1 जुआ

2 मद्यपान

3 वेश्यावृत्ति

6 जलवायु की समस्या– भारत की जलवायु गर्म है। और श्रमिको को कठोर परिश्रम करना पडता है। पोषण के अभाव में कार्य क्षमता में कमी आती है।

7 काम करने की बुरी दशाएं – मजदूरो के काम करने की जो दशाएं है। उनकी विशेषताएं निम्न है।

- धूल–धुआं आदि से सुरक्षा का अभाव
- काम के अधिक घंटे
- स्वच्छ वायु और प्रकाश की कमी
- सुरक्षा का अभाव
- स्वच्छता का अभाव
- कल्याण कार्यो की कमी और अतःयवस्था

8 दोषपूर्ण प्रबंध की समस्या – इसके अंतर्गत दो प्रकार की समस्याएं आती है।

- मालिक का व्यवहार
- काम का दोषपूर्ण विभाजन

9 मजदूरों की छुटटी और सर्वेतनिक अवकाश की समस्या

10 मजदूरो की निर्धरता की समस्या

11 शिक्षा का अभाव और मजदूरो की अज्ञानी प्रकृति

12 आवास की समस्या

13 प्रवासिता– प्रवासी प्रवृत्ति भारतीय श्रमिको की मौलिक विशेषता है। प्रवासिता का अर्थ यह है कि भारतीय श्रमिक जहाँ काम करते है। वहाँ के मूल निवसी नही होतें है। इसके करण इनका एक स्थान से दूसरे स्थान को आना जाना बना अवसर को एक स्थान से दूसरे स्थान को जातें है। इस कारण उन्हें अपना कार्य छोड़ना पडता है। बाटा जा सकता है।

- कुटीर उद्योगो का पतन
- जनसंख्या में वृद्धि
- भूमि पर जन संख्या का अधिक दबाव,

प्रवासिता के दुष्परिणमः

- औद्योगिक संगठनो पर प्रभाव
- काम की अनिश्चितता में वृद्धि
- मजदूरी मे कमी
- कार्यकुशलता मे कमी
- स्वास्थ्य पर बुरा असर
- अधिक व्यस्तता और मस्तिक पर अधिक दबाव

- स्वास्थ्य मनोरंजन का अभाव और बुरी प्रवृत्तियों का विकास

14 श्रमिको के हेर फेर की समस्या– उद्योग में ऐसा पाया जाता है। कि कर्मचारियो के कार्यों की प्रकृति में हेर फेर किया जाता है। या परिवर्तन होता है। इस हेर फेर की समस्या का श्रमिको के ऊपर निम्न कुप्रभाव पड़ता है।

- श्रमिको की कार्यक्षमता मे कभी आती है।
- इससे श्रमिको के संगठन को हानि पहुॅचाती है।
- इसके परिणामस्वरूप मानवीय व भौतिक प्रसाधनों के उपयोग में कठिनाई उत्पन्न होती है।
- श्रमिको के हेरफेर था परिवर्तन के कारण श्रम संगठनो को अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।
- अनिश्चितता के कारण श्रमिक अपने भविष्य के सम्बन्ध में किसी प्रकार की योजना का निर्माण नही कर सकतें है।
- सेवाओ मे स्थायित्व की कभी के कारण उनके जीवन मे उथल पुथल मची रहती है। श्रमिको के हेर फेर की प्रवृत्ति के कारण भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन मिलता है।

15 श्रमिको के भर्ती की दोषपूर्ण पद्धति– श्रमिको की दूसरी महत्वपूर्ण समस्या उनके भर्ती की पद्धति से सम्बन्धित है। इन समस्याओं में से कुछ समस्याएं इस प्रकार है।

- भर्ती के अतिरिक्त श्रमिकों की पदोन्नति में कोई भी संतोषजनक नियम नही होते है। जिससे पदोन्नति के परिणामस्वरूप मजदूरी में असंतोषजनक की भावना का विकास होता है।
- स्थानान्तरण में भी पक्षपात किया जाता है। इसके कारण से भी श्रमिको में अनेक प्रकार की समस्याओ का जन्म और विकास होता है।
- श्रमिकों की भर्ती महयस्थो के द्वारा होती है। ये मध्यस्थ अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न करतें है।

क. भर्ती से मजदूरो से कमीशन लेते हैं।

ख श्रमिकों की भर्ती मे कुशलता और अकुशलता को महत्व नही देतें है।

ग. श्रमिको और मालिको के बीच तनाव और संघर्ष की स्थिति को जन्म देते है।

16 निम्न जीवन स्तर – जीवन स्तर का सम्बंध मनुष्य की आदत से है जीवन स्तर रहन सहन के तरीको को कहतें है। जीवन स्तर की सुविधा की दृष्टि से दो भागो में बाँटा जा सकता है। उद्योग और समाज

- गंदी बस्तियों में निवास
- असंतुलित और पर्याप्त भोजन
- स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव

- अशिक्षा और अज्ञानता में वृद्वि
- कार्यकुशलता में कमी
- स्वस्थ्य मनोरंजन का अभाव और जनसंख्या मेंवृद्धि

17. रूढ़िवादिता और परम्परा प्रेम

18 भारतीय श्रमिको मे प्रशिक्षण के अभाव की समस्या वर्ग संघर्ष की समस्या

19 वर्ग संघर्ष की समस्या

20 पुरानी मशीनो के उपयोग की समस्या

21 पाली व्यवस्था के दोषप्रायः सभी देशो और उद्योगों में पाली और शिफ्ट की व्यवस्था पायी जाती है। इस पाली की प्रथा के कारण मजदूरो को निम्न समस्याओं का सामना करना पडता

- शिफ्ट प्रणाली के कारण मजदूरों को अनेक प्रकार की दुर्घटनाओ का सामना करना पडता है।
- रात्रि पालियां स्वास्थ्य पर बुरा असर डालती है। और इससे श्रमिको की आयु सीमा कम होती है।
- रात्रि पाली मे पति पत्नी अलग रहतें है। और इससें अनैतिकता मे वृद्धि होती है।
- कुछ शिफ्ट ऐसे होते समय में प्रारंभ और समाप्त होते है। कि न तो समय पर खाना ही मिल पाता हे। और न ही नीद पूरी होती है।
- कार्य के धण्टे फैले हुए होने के कारण मजदूरों को असुविधा का अनुभव होता है।

22 सामाजिक दशाओं और प्रथाओं से सम्बन्धित समस्याएं जैसे

- जाति प्रथा
- संयुक्त परिवार
- जातीय रीति रिवाज और कानून

23 औद्योगीकरण ने राष्ट्रो के उत्थान का मार्ग दिखाया है। तथा अर्थव्यवस्था के में सुधार महत्वपूर्ण योगदान किया है। इंग्लैण्ड अमेरिका फास जापान आदि देश अपनी औद्योगिकरण ने राष्ट्रो कीसामाजिक संरचना का रूप ही बदल दिया है। उसमें औद्योगीकरण ने राष्ट्रो कीसामाजिक संरचना का रूप में विकसित हो गया हैं जो संपूर्ण समाज एक नए अंग के रूप में विकसित हो गया है। जो संपूर्ण समाज को प्रभावित्त करता है। यह समाज देश के साधनो का विदोहन करने उपयोगिता का सृजन करने उत्पादन एव वित्तरण करने आदि कियाओं में अपना महत्वपूर्ण योगदान एवं वित्तरण करने आदि कियाओ में अपना महत्वपूर्ण योगदान देता है। लेकिन इसके साथ ही इस समस्याओं का प्रभाव संपूर्ण समाज पर पडता है। तथा औंद्योगिक सम्बंधो व सामाजिक सम्बन्धो को प्रभावित्त करता है। इन समस्याओं के निराकरण एवं सामाजिक शांति के लिए सामजशास्त्री अर्थशास्त्र एवं राजतनीतिज्ञो द्वारा विशेष रूप से अध्ययन करना आवश्यक हो गया है। ये समस्याएं निम्नलिखित है–

1 श्रम अधिनियमों की समस्या – औद्योगिक समाज मे श्रमिक वर्ग उद्योगपतियों एवं प्रबन्धको के वर्ग की अपेक्षा आर्थिक साधनो की दृष्टि से पिछडा हुआ है। तथा उद्योगपतियों द्वारा उसे कम से कम देकर अधिक से अधिक कार्य लेने का प्रयास किया जाता है। उसका श्रम नाशवान प्रकृति का है। अतः उसकी क्रय शक्ति कमजोर होती है। उसकी यह दुर्बलता उसके शोषण होने में सहायता देती है। अतः उसके हितो की रक्षा के लिए विभिन्न श्रम अधिनियमो का निर्माण करना आवश्यक होता है। आज के औद्योगिक समाज में विभिन्न प्रकार के श्रम अधिनियमों का निर्माण एवं उनका सही रूप से प्रशासन करना एक जटिल समस्या बन गया है। श्रम अधिनियम बनने पर समाज इन नियमों का लाभ श्रमिक को वास्तविक रूप से मिले भी यह एक भयंकर समस्या है।

2 नैतिक पतन की समस्या – अभाव एवं गरीबी के वातावरण मे श्रमिक का नैतिक पतन भी हो जाता है। वह मधपान जुआ पर स्त्री गयन चोरी वैश्यावती एवं अन्य अपराध भी करने लगता है।

3 नौकरशाही की समस्या – औद्योगिक व्यवस्था ने नोकरशाही को जन्म दिया है। मैक्स वेवर के अनुसार नौकरशाही विशेष योग्यता निश्पाता और मानवता के अभाव में लक्षण युक्त प्रशासकीय व्यवस्था है। प्रो लास्की के शब्दो में यह वह व्यवस्था है। जिसका नियंत्रण अधिकारियों के हाथ में इस प्रकार से है। कि उनकी शक्ति सामान्य नागरिक की स्वतंत्रता को समाप्त कर देती है। श्रमिको के समूह से कार्य कराने के लिए व्यवस्था का जन्म हुआ है। लेकिन इसने कई दोषो को जन्म दिया है। जैसे लाल फीताशाही सत्तावादी मनोवृत्ति श्रेष्ठता की भावना की ग्रंथि अवैयक्तिक सम्बंधो पर जोर रूढ़िवादिता मे परिवर्तन करना आवश्यक है।

4 प्रदूषण – औद्योगिक सामाज ने प्रदूषण की भयंकर समस्या को पैदा किया है। उद्योगो की चिमनियों से निकालने वाले घुएं उत्पादन की प्रकिया मे निकला व्यर्थ कचरा व निरंतर चलने वाली मशीनो की आवाज सारे वातावरण को दूषित प्रदूषित करती है। तथा इससे संपूर्ण समाज के लिए जीवन जीने का खतरा उत्पन्न हो गया है।

5 सामाजिक सुरक्षा की समस्या – औद्योगिक समाज में श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना समाज का दायित्व हो गया है। बेकारी बीमारी बृद्वा वस्था शारीरिक असमर्थता आदि ऐसे संकट है। जो श्रमिक के समक्ष कभी भी आकार खडे हो जातें है। उस संकटो से अपनी रक्षा करना अल्प आय के कारण श्रमिको के लिए संभव नही हो पाता विना किसी दोष के काम न मिलने पर आश्रितो को सहायता तथा वृद्वावस्था मे जीवन यापन हेतु आवश्यक साधनोकी व्यवस्था करना आवश्यक होता है। इस प्रकार की सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना तथा उसकी समुचित व्यवस्था रखना औद्योगिक समाज की विचारणीय समस्या है।

6 सेविवर्गीय प्रबंधन की समस्या– औद्योगिक समाज ने सेविवर्गीय प्रबंध की समस्या उत्पन्न की है। विभिन्न प्रकृति के व्यक्तियो का निश्चित उद्देश्यों की पूर्ती हेतु किस प्रकार से नियोजन संगठन नियंत्रण एवं निर्देशन किया यह एक विशिष्ट योग्यता और कुशलता का कार्य हो गया है।

7 बेकारी की समस्या– श्रम विभाजन एवं विशिष्टीकरण के लिए श्रमिको से किसी की केवल कोई उपक्रिया कराई जाती है। जिससे उस कार्य को करतें रहने से श्रमिक की क्षमता उस किया तक सीमित हो जाती है। उस विशिष्ट किया का कार्य कम होने पर श्रमिक बेकार हो जाते है। इसके अतिरिक्त यंत्रीकरण भी श्रमिको को बेकार करने मे योगदान देता है। आज की व्यवस्था में बड़े पैमाने पर उत्पादन करने हेतु अधिक पूँजी की आवश्यकता होती है विशेषकर भारत जैसी अर्थव्यवस्था के देश में अतः उद्योगपतियों द्वारा कार्य न देने पर श्रमिको मे बेकारी की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

8 निर्धरता एवं ऋणग्रस्तता– भारतीय औद्योगिक समाज ऋणग्रस्तता भी एक भयंकर समस्या है। श्रमिक की आय का स्तर बहुत नीचा है। तथा उसे बाध्य होकर अपनी आवश्यक आवश्यकताएं तथा परम्परागत सामाजिक आवश्यकताओं जैसे विवाह मृत्यु के समय दिए जाने वाले भोजो के लिए ऋण लेने को बाध्य होना पड़ता है। निर्धनता एवं ऋणग्रस्तता का ऐसा चक्र चलता है कि श्रमिक एक बार फसने पर उससे निकल ही नही पाता।

9 औद्योगिक संघर्ष की समस्या– औद्योगिक व्यवस्था में औद्योगिक संघर्ष पाये जातें है। इन संघर्षो के अनेक कारण है। जैसे वेतन एवे महँगाई भत्ता श्रमिको को दिया जाने वाला बोनस काम के घण्टे छँटनी अवकाश एवं छुटटियां आदि यें संघर्ष हडताल तालाबंदी उद्योगपतियां का घेराव मंद गति से कार्य करना तोड फोड आगजनी के रूप में देखे जाते है। तथा समाज की सामान्य व्यवस्था पर बुरा प्रभाव डालतें है। इनसे एक ओर तो देश के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा दूसरी ओर सामाजिक व्यवस्था भी भंग होती है। आजकाल श्रमिको द्वारा अपनी मांग को पूरा करने के लिए सामान्य हथियार के रूप में हडताल एवं तोड फोड अपनाएं जातें हे। इन पर नियंत्रण रखना समाज की एक आवश्यक समस्या बन गया है।

10 आवास की समस्या– औद्योगिक क्षेत्रो में जिस तेजी से श्रमिको की संख्या में वृद्धि हुई है। उस अनुपात में श्रमिक के लिए आवास व्यवस्था का विकास नही हुआ है। इसके फलस्वरूप औद्योगिक नगरो में गंदी एवं अस्वस्थकार इन बस्तियों में समान सुविधा का अभाव पाया जाता है। प्रकाश पेयजल सफाई आदि की कोई समुचित व्यवस्था नही मिलती एक ही कमरे मे पूरे परिवार का रहना एक सडक पर रात्रि गुजारना एक सामान्य बात हो गई है। इस प्रयत्न भी किए गए है। लेकिन यह समस्या अपने विकराल रूप में भारत में आज भी विधमान है।

11 वर्ग भेद की समस्या– औद्योगिक समाज मे दो प्रमुख वर्ग मिलतें है। पहला पूंजी पति आद्योगपतियों एवं प्रबन्ध का वर्ग जो अर्थिक तथा शैक्षिणक दृष्टि से विकसित होता है। यह वर्ग समाज मे उपलब्ध सुविधाओं का बडी मात्रा में प्रयोग करना अपना अधिकार समझाता है। तथा अपनी सुख सुविधाओं के लिए श्रमिक वर्ग का शोषण करना अपने साधनो के आधार पर अपना अधिकार मानता है। दूसरा वर्ग श्रमिको का है। जो आर्थिक एवं शिक्षा के दृष्टि से पहले वर्ग की तुलना में बहुत पीछे है। यह वर्ग अपनी असमर्थताओं तथा श्रम की नाशवान प्रकृति होने के कारण पहले वर्ग द्वारा शोषित किया जाता है। इस प्रकार सामाजिक सम्पत्ति के वितरण के आधार पर बने दो वर्गो मे सम्पन्न लोगो द्वारा

निर्धन लोगो का शोषण करना एक ज्वलन्त समस्या है। जो समाज में ईर्ष्या देय घृणा एवं हीन भावना को जन्म देती है।

प्रदूषण की समस्याः— मानवीय क्रियाओ से प्राकृतिक वातावरण के दूषित होने को प्रदूषण कहते है। मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनेक आर्थिक क्रियाओं से उत्पादन एवं आर्थिक लाभ तो होता है। लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से इनका प्राकृतिक वातावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। वातावरण दूषित होता है। तथा मानव जाति के लिए खतरा उत्पन्न हो जाता है। प्रसिद्व अर्थशास्त्री केरनक्रम के अनुसार उप्प विकसित देश विश्व की गन्दी बस्तियां है। ठीक ही है। लेकिन यदि यह कहा जाय कि अति औद्योगिक देश अब गन्दी बस्तियों विश्व स्वास्थ्य के लिए खतरा बनती जा रही है। औद्योगिक क्रियाओं का सम्पूर्ण वातावारण पर विभिन्न प्रकार के विपरीत प्रभाव पड़ता है। जिसे समग्र रूप से कहा जाता है

प्रदूषण के प्रकार — प्रदूषण औद्योगिककरण से उत्पन्न एक समस्या है। जिसके तीन प्रकार है।

1 वायुमण्डल प्रदूषण — पिछले तीन दशको मे भारी उद्योगो का बडी तीव्रता विकास हुआ है। बड़ी संख्या मे बड़े बड़े कारखाने लगाये गए हैं इन कारखाने में लगी भट्टियो चिमनियो एवं उपादन प्रक्रिया में निकलने वाली गैसी से वायुमण्डल दूषित हो रहा है। यातायात के साधनो मे वाहनो के चलाने हेतु पेट्रोल एवं कचरे के देर सडके रहतें है। जो अपनी दुर्गन्ध से वायुमण्डल को प्रभावित्त करतें है। इन विभिन्न क्रियाओ की निरन्तता वायुमण्डल की दूषित कर रही है। वायुमण्डल का निरन्तर दूषित होना ही वायुमण्डल प्रदूषण कहलाता है।

2 जल प्रदूषणः— नदी एवं सागर कजल के दूषित होने को जल प्रदुषण कहतें है। कारखाने से निकलने वाला गन्दा पानी एवं कचरा जब नदी एंव समुद्र कोजल में समुद्र के जल की विवान्क बना देता है। यही स्थिति जापान के समुद्री क्षेत्र की है। भारत में मुम्बई दिल्ली कानपुर एवं कलकत्ता के कारखानो द्वारा निष्कासित व्यर्थ पदार्थो का विसर्जन समुद्री जल एवं गंगा व हुगली नदी को जल को विशाक रहा है। जिससे जल के जीवो का धीरे धीरे विनाश होता जा रहा है। प्रो बी एल अजमेरा के अनुसार भारत का सबसे अधिक प्रदुषित जल मुम्बई के आसपास की समुद्री खाडियो में है।

3. ध्वनि प्रदुषण — प्राकृतिक शांति को भंग करने की ध्वनि प्रदुषाण कहा जा सकता है। मशीन एवं यन्त्रो की घडघडाहट मिलो क गूजतें हुए सायरन रेलो बस व ट्रको तथा वायुयानो का आकाश भेदी तेज आवाज की निरन्तता का प्रभाव मनुष्यो की श्रवण शक्ति अपनी सामान्य श्रवण शक्ति को खो रहें है।

प्रदुषण के कारणः— विभिन्न प्रकार के प्रदुषणो के आधार पर पर्यावरण प्रदूषण के निम्नलिखित प्रमुख कारण उल्लेखनीय है —

- मिलो से निकलने वाला धुआं
- उत्पादन प्रक्रिया से निष्काषित गैसे

- रेल बस कार स्कूटर ट्रको तथा वायुयान से निकलने वाला धुआं
- कारखाना से निकलना वाला व्यर्थ कचरा तथा गंदगी
- हानिकारक एवं विषाक्त रासायनिक पदार्थों को जल मे प्रवाहित करना
- औद्योगिक उपयोग के लिये किये जाने वाला विस्फोंटक
- औद्योगिक नगरो में होने वाला अतःयधिक शोरगुल आदि

प्रदुषण के प्रभाव – प्रदुषण के प्रभाव बडा व्यापक होता है। किसी एक औद्योगिक देश के नागरिको को प्रभावित नही करता बल्कि विश्व के सभी देशो के नागरिक प्रभावित होते है। इसके प्रभाव को एकाएक अनुभव नही किया जा सकता लेकिन शनैः शनैः चल रहे प्रदुषण के बडे धातक प्रभाव समस्त जीवो पर पडतें है। इसके प्रभावो को सूक्ष्म रूप में निम्नलिखित प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है–

1 मानव जीवन पर प्रभाव–विषाक्त वातावारण से मानवीय जीवन पर घातक प्रभाव पडता है। इसके कारण मनुष्य अनेक रोगो से ग्रसित हो जाता है। जिससे जल के जीव या तो मर जातें है। या स्वंय विषाक्त हो जाते है। उनकी आयु कम होती है। जल में पदी मछलियों के जाने से भी अनेक व्यक्ति भयंकर रोगो के शिकार हो जातें है।

2 अन्य जीवों पर प्रभाव – विषाक्त रासायनिक प्रदार्थो व व्यर्थ कचरे को नदी एवं समुद्र को जल में प्रवाहित कर देने से जल भी विषाक्त हो जाता है। जिससे पानी के जीव मर जाते है। वायुमण्डल के दूषित होने से बहुत से पक्षी भी मर जातें है।

3. प्राचीन भवनो पर प्रभाव – यह भी अनुमान है कि प्रदुषण प्राचीन कलात्मक भवनो के सौन्दर्य के लिए भी खतरा है। मधुर में बन रहें खनिज तेल शोधक कारखाने से उत्पन्न खतरो मे यमुना के जल का दूषित होना भरतपुर में स्थित घना पक्षी विहार मे पक्षियों का बसेरा समाप्त होना तथा ऐतिहासिक भवन जिसमे ताजमहल का भवन भी सम्मिलित है। अपने स्वभाविक सौन्दर्य का दूषित वातावरण के प्रभाव से स्थायी न रखे सकेगा आदि सम्मिलित है।

इस प्रकार प्रदुषण के अनेक घातक प्रभाव होते है। जिन्हे रोकने के लिये प्राभावशाली उपायोग की आवश्यकता है।

प्रदुषण रोकने के उपाय– मानवीय आवश्यकतओ को देखतें हुए औद्योगिक करण को तो नही रोका जा सकता लेकिन इससे उत्पन्न प्रदुषण को रोकने को प्रभावशाली उपाय अवश्य किये जाने चाहिए इस सम्बंध में निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकतें है।

1 अन्तर्राष्ट्रीय नीति– प्रदुषण की समस्या किसी एक राष्ट्र की नही है। बल्कि समस्त विश्व की समस्या है। दूषित वातावरण विश्व के सभी नागरिक को प्रभावित करता है। अतः प्रदुषण को रोकने के लिए तथा इसके प्रभावो को निष्क्रिय करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय नीति बनाई जानी चाहिए तथा सभी देशो को इस नीति का अनिवार्यतः पालन करना चाहिए।

2 शोध एवं अनुसंघान– प्रदुषण के कारणो प्रभावों एवं उन्हें रोकने के उपायों का उच्च स्तरीय शोध एवं अनुसंघान के कार्य किया जाना चाहिए प्रत्येक औद्योगिक देश पर राष्ट्रीय

स्तर पर इसकी व्यवस्था की जानी चाहिए तथा इस कार्य के लिए उच्च शिक्षा प्राप्त विशेषज्ञ नियोजित किए जाने चाहिए।

3. उद्योगपतियो द्वारा ध्यान देना– उद्योगपतियो को इस समस्या की गंभीरता समझनी चाहिए तथा जहाँ तक सम्भव हो प्रदुषण को रोकने के उपाय के बनाते समय ही निश्चित किये जाने चाहिए उन्हे अपने उद्योग के वजट में प्रदुषण के निवारण हेतु एक निश्चित राशि नियमित रूप से निर्धारित करनी चाहिए

4. घातक प्रयोगो को बंद किया जाय– ऐसे वैज्ञानिक प्रयोग बंद किए जाने चाहिए जिनका वातावरण एवं जल पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। परमाणु शक्ति के प्रयोग एवं विस्फोटो से बड़ी मात्रा में वातावरण पर घातक प्रभाव पड़ता है। अतः ऐसे प्रयोग करने से पूर्व उसके कुप्रभावो से बचने की पहले व्यवस्था हो जाने पर ही किये जाने चाहिए

5. वृक्षों को लगाना – औद्योगिक क्षेत्र आवासीय क्षेत्र से दूर बनाये जाने चाहिए तथा औद्योगिक क्षेत्र के निकट बडी मात्रा में वृक्ष लगाये जाने चाहिए इससे वातावरण पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

6 गोविठयो का आयोजन– प्रदूषण पर राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय स्तर पर वैज्ञानियों तथा आद्योगिक संस्थान परिवहन संस्थानों को आवश्यक रूप से पालन करना चाहिए।

इकाई–3

सामाजिक सुरक्षा का उद्‌गम

समाजिक सुरक्षा शब्द का उदगम औपचारिक रूप से सन 1935 से माना जाता है जबकि प्रथम बार अमेरिका मे सामाजिक सुरक्षा अधिनियम पारित है। जबकि प्रथम बार अमेरिका मे सामाजिक सुरक्षा अधिनियम पारित किया गया इसी वर्ष बेरोजगारी बिमारी वृद्वावस्था बीमा की समस्या का समाधान करने के लिए एक सामाजिक सुरक्षा बोर्ड का गठन किया गया 3 वर्ष बाद सन 1938 में सामाजिक सुरक्षा शब्द का प्रयोग न्यूजीलैण्ड मे किया गया सन 1941 मे एटलांटिक चार्टर क अंतर्गत सभी देशो को उद्योग के सभी क्षेत्रो में सामाजिक सुरक्षा को प्रोत्साहन करने को कहा गया सन 1943 में सर विलियम वैवारिज द्वारा एक नयी योजना बनायी गयी उन्होने अपनी रिर्पोट सामाजिक बीमा एवं संबंधित सेवाएं के अर्तगत ब्रिटिश जनता को आभाव से मुक्ति दिलाने के लिए सामाजिक सुरक्षा योजनाएं बनाने का सुझाव दिया।

समाजिक सुरक्षा से अर्थ एवं परिभाषाएं–

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार वह सुरक्षा जो समाज उचित संगठनों के माध्यम से अपने सदस्यो के साथ घटितः होने वाली कुछ घटनाओ और जोखिम से बचाव के लिए प्रस्तुत करना सामाजिक सुरक्षा है।

मॉरिस स्टैक के मत मे सामाजिक सुरक्षा से समाज द्वारा आधुनिक जीवन की उन आकसमिकताओं जैसे बीमारी बेरोजगारी औधोगिक दुर्घटना तथा अशक्तता के विरूद्व सुरक्षा के कार्यक्रम का बोध होता है। जिनके लिए व्यक्ति द्वारा अपने स्वयं के सामर्थ या दूरदर्शिता से अपनी या अपने परिवार की रक्षा की आशा नही की जा सकती

डब्ल्यू एच बॉटकिन्सन के मत में सामाजिक सुरक्षा का अर्थ बेरोजगारी बीमारी या दुधर्टना के अवरूद्ध होने वाले उपजिनो के स्थान पर आय सुरक्षित करना वृद्वावस्था के कारण अवकाश प्राप्त की अवधि के लिए व्यवस्था करना दूसारे व्यक्ति के निधन से होने वाले सहारे के लोप की स्थिति में प्रबंध करना तथा जन्म मृत्यु या विवाह के संबंद्ध असाधारण व्यय की व्यवस्था करना।

सर विलियन वैवरिज के अनुसार– सामाजिक सुरक्षा योजना एवं सामाजिक बीमा योजना है जो व्यक्ति को संकट के समय अथवा उस समय जब उसकी कमायी कम हो जाये तथा जन्म मृत्यु या विवाह होने वाले अतिरिक्त व्यय की पूर्ति के लिए लाभान्वित करती है।

सामाजिक सुरक्षा का पद्वतियां या तरीके–

क. सामाजिक बीमाः सामाजिक बीमा एक ऐसी विधि है। जिससे अल्प आय वाले वर्गों को लाभन्वित किया जाता है। यह लाभ अधिकार के रूप में प्राप्त होता है। इसके लिए आवश्यक राशि सभी वर्गों से एकत्रित की जाती है। इस अंशदान में कर्मचारी नियोक्ता तथा सरकार का सहयोग होता है। सर विलियम वैवरिज ने सामाजिक बीमा को परिभाषित करते

हुए कहा है। यह योजना अंशदान के बदले में दिया जाने वाला वह लाभ है। जो जीविका निर्वाह स्तर के लिए देय है तथा अधिकार के रूप में बिना किसी जॉच के देय हैं जिससे व्यक्ति अपना निर्वाह स्वतंत्रता से कर सके अमेरिकन रिस्क ऐड इन्स्योरेस एसोशिएयन द्वारा नियुक्त सामाजिक बीमा शब्दावली समिति ने सामाजिक बीमा की निम्नलिखित विशेषताओ पर जोर दिया हैं

- प्रायः सभी द्रष्टांतो में व्यप्ति कानून द्वारा अनिवार्य होती है।
- हितलाभ निर्धारित करने की विधि कानून में ही विहित रहती है।
- सामाजिक बीमा मे वित्त संबंधी निश्चित दीर्घकालिन योजना रहती है।
- सामाजिक बीमा की लागत की व्यवस्था मुख्य रूप से बीमा कुछ व्यक्तियो उनके नियोजकोक या दोनो के अंशदान से होती है।
- सामाजिक बीमा योजना केवल सरकारी कर्मचारियों के लिए ही स्थापित नही की जाती है।
- हिताधिकारियों के लिए अपने अपर्याप्त आर्थिक साधनो को प्रदर्शित करना आवश्यक नही है।
- सामाजिक बीमा योजना का प्रशासन सरकार द्वारा उसके पर्यावेंक्षण में होता है।

ख. सामाजिक सहायता – सामाजिक सहायता साधारणत अल्प साधन वाले व्यक्तियों की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आर्थिक सहायता के रूप में दी जाती है। सामाजिक सहायता में लाभान्वित होने वाले व्यक्ति्यों को अंशदान नहीं देना पड़ता है। लेकिन उन्हे सहायता अधिकार स्वरूप मिलती है। सहायता की राशि सामान्यतः कानून या नियमो द्वारा सीमित की मात्रा का निर्धारण प्रशासन द्वारा होता है। साधारणतः सकता सामाजिक सहायता कार्यक्रमों के कुछ उदाहरण निम्न है।

- वार्धक्य सहायता
- नेत्रहीनो को सहायता
- आश्रित बालको के लिए सहायता या भत्ता
- स्थायी तथा पूर्णरूप से असक्तो को सहायता
- अतिनिर्धन परिवारो को सहायता

ग. सार्वजनिक या सामाजिक सेवा– कुछ लोग सामाजिक सुरक्षा की एक तीसरी पद्वति सार्वजनिक या सामाजिक सेवा बतातें हैं सार्वजनिक या सामाजिक सेवा के कुछ उदाहरण है। जैसे निशुल्क स्वास्थ्य सेवाएं समाज के बाधित समूहो का पुनवीसन परिवारिक भत्ते तथा विशेष जनसमूहो के लिए पेंशन या अनुदान है। अधिकांशत देशो मे सामाजिक बीमा सामाजिक सुरक्षा विकसित अवस्था है। निर्धन देशो में सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता होती है। लेकिन उनमें इसकी व्यवस्था करने के लिए आर्थिक क्षमता का अभाव रहता है।

भारत में सामाजिक सुरक्षा का विकास–

भारत में सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमो का प्रारंभ बहुत बाद में और छिट पुट ढंग से हुआ। देश में औद्योगिकीकरण 19वीं सदी के मध्यकाल से शुरू हो गया था अन्य देशो की तरह भारत में औद्योगिक श्रमिको को भी बीमारी दुर्घटना बुढापा प्रसूति बेरोजगारी आदि आकसमिकताओ की स्थित मे तरह तरह के आर्थिक संकट झेलने पडतें थें प्रथम विश्वयुद्व के समय देश में औद्योगिक करण की गति तेज हुई जिसके फलस्वरूप औद्योगिक एवं अन्य प्रतिष्ठानो मे श्रमिको की संख्या में व्यापक वृद्धि हुई उस समय एक औद्योगिक श्रमिकों ने अपने संगठन भी बनाने शुरू कर दिए थें 1919 ई. सदी में प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद व साईल्स की सन्धि के फलस्वरूप अंतराष्टीय श्रम संगठन की स्थापना की गयी औद्योगिक श्रमिकों के लिए सामजिक सुरक्षा की व्यवस्था के महत्व को स्वीकार करते हुए सरकार ने समय समय नियुक्त समितियां आयोग तथा श्रम के सम्बद्ध कुछ सम्मेलनो में इस विषय को विचारर्थ रखा सामाजिक सुरक्षा के सम्बद्व समितियां आयोग और सम्मेलनो के विचारो ओर उनकी सिफारिशो को संक्षिप्त उल्लेख नीचे किया जाता है।

- शाही श्रम आयोग 1929 ई०
- विहार श्रमिक जाँच समिति 1938 ई0
- बम्बई वस्त्र श्रमिक जॉच समिति 1937 ई०
- कानपुर श्रमिक जॉच समिति 1937 ई०
- श्रम मंत्रियों का पहला सम्मेलन 1940 ई०
- श्रम मंत्रियो का दूसरा सम्मेलन 1941 ई०
- श्रम मंत्रियों का तीसरा सम्मेलन 1942 ई०
- प्रो0 अदारकर की रिर्पोट तथा स्वास्थ्य बीमायोजना का विकास 1925ई0
- प्रसूति हित लाभ योजनाओं का विकास 1929 ई०
- उपदान योजना 1970 ई0
- बेरोजगारी के विरूद्व संरक्षा 1972 ई०
- सार्वजनिक सामाजिक सुरक्षा योजना
- अन्य योजनाएं

भारत मे सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता

भारत मे गरीबी रोग प्रसवकालीन मृत्यु तथा शिशु मृत्यु कीउची दरे कम औसत आयु बेरोजगारी एवं अर्द्ध बेरोजगारी आदि कठिनाइयो सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की आवश्यकता बढाती है। यह योजना सामाजिक सहायता के रूप में अथवा सामाजिक बीमा के रूप में चलायी जा सकती है। प्राचीन भारतीय समान्य में व्यक्ति विशेषआपसी सहयोग मेल जोल तथा संपर्क के आधार पर अपने आपको सामूहिक रूप से सुरक्षित समझता था

- आत्मनिर्भर ग्रामीण व्यवस्था
- जाति प्रथा
- सयुक्त परिवार प्रणाली
- दानव्यवस्था सामाजिक सुरक्षा का रूप था

भारत मे सामाजिक सुरक्षा संबंधी उपाय–

भारत मे सामाजिक सुरक्षा संबंधी अनेक उपाय किये गयें है। जिनके अन्तर्गत यह अधिनियम पारित किए गए है।

- श्रमिक क्षतिपूर्ति संशोधित अधिनियम 1984
- प्रसूति लाभ अधिनियम 1961
- कर्मचारी राज्य बीमा संशोधित अधिनियम 1984
- कोयला खान भविष्य निधि एवं विविध व्यवस्थाएं अधिनियम 1952
- अनुग्रह भुगतान अधिनियम 1972
- जमा समबद्ध बीमा योजना 1976
- सामाजिक सुरक्षा सर्टीफिकेटस

1 श्रमिक क्षतिपूर्ति संशोधित अधिनियम 1984 – यह अधिनियम मार्च 1923 मे पारित किया गया और 1 जुलाई 1924 से लागू हुआ इसमें अब तक कई बार संशोधन किए जा चुके हैं और अंतिम संशोधन 1984 में किया गया है। इन संशोधनो का उद्देश्य अधिनियम के सीमा क्षेत्र को बढाना व व्यवस्था कोम अधिक उपयोगी तथा अधिक प्रभावशाली बनाना रहा है इसके अधीन श्रमिक हर्जाना की व्यवस्था किसी रोजगार सम्बधी चोट या व्यवसायिक रोग के कारण श्रमिक की मृत्यु या असमर्थता को दूर करने के लिए की गयी है तथा इसका व्यय केवल सेवा योजक को उठाना पडता है तथा यह व्यवस्था औद्योगिक दुर्घटनाओ से श्रमिक के संरक्षण के लिए सेवा योजक के दायित्व के सिद्धांत का प्रतिपादन करती है। इसके अन्तर्गत क्षतिपूत्रि का अधिकार किसी श्रमिक को उसी समय होता है। जब कोई दुर्धटना या रोग हुआ हो तथा यह दुर्धटना या रोग काम के अन्तर्गत और काम के दौरान उनका वेतन कितना ही क्यो न हो जो श्रमिक कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948 के अंर्तगत शामिल है। वे भी इसके अंतर्गत क्षतिपूर्ति पाने के अधिकारी है। अधिनियम के अंतर्गत धारा के अनुसार सेवायोजक इन दशाओ में क्षतिपूर्ति के लिए जिम्मेदारी नही होगा।

मृत्यु होने पर क्षतिपूर्ति कीराशि कर्मचारी कीआयु व आय के आधार पर निर्धारित की जाती है। उदाहरण के लिए 1000 रूपये महावार पाने वाले कर्मचारी की मृत्यु के समय आयु 20 वर्ष हैं तो क्षतिपूर्ति की राशि 90000 रूपये होगी इसी प्रकार ऐसे ही कर्मचारी की आयु 40 वर्ष की है। तो क्षतिपूर्ति 74000 व 55 वर्ष की आयु पर 54000 रूपये होगी इस प्रकार यदि 1000 रू0 पाने पाले की स्थायी अयोग्यता 20 वर्ष की उम्र हो जाती है। तो उसे 12000 रूपये क्षतिपूर्ति के रूप में दिए जायेगी यदि स्थायी आयोग्यता ऐसे ही कर्मचारी की जो 1000 रूपयें महावार पाता है। 40 वर्ष की उम्र पर होती हैं तो क्षतिपूर्ति की राशि 93000 रूपये व 55 वर्ष की उम्र में होती है। तो 68000 रूपयें

2 प्रसूति लाभ अधिनियम – प्रसूति लाभ महिला कर्मचारी को बच्चे के जन्म से पहले तथा बाद मे काम पर अनुपस्थित रहने पर दिया जाता है। यह अनुपस्थिति अनिवार्य होती है। जिससे स्वयं माता तथा उसके बच्चे के स्वस्थ्य कन्वेशन ने 12 सप्ताह की छुटटी के लिए व्यवस्था की थी भारत सरकार उस कन्वेशन को कुछ कठिनाइयो के कारण जैसे

महिला डॉक्टरों की कमी होने से अपने देश में लागू नहीं कर सकी फिर भी बहुत सी राज्य सरकारो ने समय समय पर इस विषय पर कानून बनाएं जैसे बम्बई राज्य द्वारा 1929 मध्य प्रदेश मे 1930 में बंगाल में 1939 में पंजाब मे 1943 में असम में 1943 मे विहार में 1945 मे महराष्ट्र में 1948 में तथा राजस्थान व उडीसा मे 1953 में विभिन्न अधिनियम में सीमा क्षेत्र पात्रता शर्तो लाभ दरों एवं लाभ अवधियों को देखतें हुए बहुत अन्तर रहता था अतः भारत सरकार ने एक रूपता लाने के उद्देश्य से 1961 मे एक नया प्रसूति लाभ अधिनियम पारित किया गया इस अधिनियम में यह व्यवस्था है। कि महिला श्रमिक के एक वर्ष से 160 दिन के सेवा काल के पूरा कर लेने पर 6 सप्ताह की छुटटी औसत वेतन पर दी जाएगी इसके अतिरिक्त नियोक्ता द्वारा 25 रूप्ये चिकित्सा भत्तें के रूप में और दिए जायेगे

सेवायोजक उसे औसत दैनिक मजदूरी की दर से इस लाभ का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा

3 कर्मचारी राज्य बीमा संशोधित अधिनियमः यह अधिनियम पूरे भारत के मौसमी कारखानो को छोड़कर सभी कारखानो मे जो शक्ति द्वारा चलातें जातें है। और 10 या ज्यादा श्रमिको को नियुक्त करतें है। या विना शक्ति के 20 या इससे आर्थिक श्रमिक कार्य करतें है लागू होता है। इसमें यह व्यवस्था की इसे किसी भी संस्था या संस्थानो पर जो औद्योगिक हो या व्यापारी या कृषि सम्बंधी या अन्य या पूरी तरह आंशिक रूप से लागू किया जा सकता है। इसमें ही हुई कर्मचारी शब्द की परिभाषा मे शारीरिक श्रमिक वर्ग तथा लिपिक सुपरवाइजरी एवं टेक्नीकल कर्मचारी शामिल है। किंतु यह उन पर लागू नही होता है। जिनकी वेतन या मजदूरी 1600 रूपये मासिक से ज्यादा है। यह जहाजी फोजी या हवाई सेनाओ में कर्मचारियों पर लागू नहीं होता।

बीमा योजना का प्रशासन—कर्मचारी राज्य बीमा निगम को सौपा गया है। इसमें केन्द्रीय राज्य सरकारो सेवायोजको एंव कर्मचारियों के संगठनो डॉक्टरो पेशे तथा तथा संसद सदस्यो के प्रतिनिधि शामिल है। एक छोटी समिति जो स्थायी समिति कहलाती है। निगम के सदस्यों से चुनी जाती है। तथा निगम की कार्यकारिणी का कार्य करती है। एक चिकित्सा लाभ कौसिल निगम को चिकित्सा लाभो के प्रशासन आदि से संबंधित मामलो पर सलाह देती है। निगम का मुख्य प्रशासक महानिदेशक होता है। जो क्षेत्रीय एवं स्थानीय कार्यालयों के द्वारा प्रशासन करता है। जो क्षेत्रीय एवं स्थानीय कार्यालयो के द्वारा प्रशासन करता है राज्य काम से क्षेत्रीय बोर्ड की स्थापना किए गए है। योजना की वित्त व्यवस्था कर्मचारी राज्य बीमा कोष द्वारा की जाती है।

1 बीमारी लाभः – व्यक्ति की बीमारी को दशाओ में उसे सामाजिक भुगतान किया जायेगा जिसे बीमारी लाभ कहेंगे बीमार की जॉच निगम के डॉक्टर या दूसरे डॉक्टर द्वारा होना आवश्यक है। बीमारी लाभ की दैनिक पर कर्मचारी की औसत दैनिक मजदूरी क आधे के बराबर होती है। किन्तु चूंकि लाभ बीमारी के सभी दिनो के लिए जिनमें इतवार और की दर मजदूरी के लगभग भाग के बराबर होती है। यह लाभ पहले दो दिनो की बीमारी के लिए नही दिया जायेगा यदि बीमारी का दौर 15 दिन के भीतर नही आता है। इस तरह मिलने वाला कुल बीमारी लाभ लगातार 365 दिनो के दौरान 56 दिन से अधिक के लिए मानसिक रोगो से पीडित 1960 से तपेदिक कोड कैंसर एवं मानसिक रोगो से पीडित

व्यक्तियो को यदि उन्होने दो वर्ष की लगातार सेवा की है। 56 दिनो के आलवा 309 दिन की अवधि तक बीमारी लाभ देने की व्यवस्था हो गयी है। जिसकी दर बीमारी दर विमारी दर की पूरी दर रखी गयी है।

2 असमर्थता लाभ– यदि कोई बीमाशुदा व्यक्ति इस अधिनियम के अन्तर्गत कर्मचारी के रूप में कार्य करते हुए किसी व्यवसायिक चोट जिससे अधिनियम की तीसरी अनुसूची मे दिये गयें कुछ व्यवसायिक रोग शामिल है के व्यवसायिक चोट शामिल है के फलस्वरूप होने वाली असर्मथता से पीडित हो जाता है। असमर्थता लाभ की पात्रता प्रमाणीकरण निर्धारित अधिकारी द्वारा होना आवश्यकता है। असमर्थता लाभ की दैनिक दर इस तरह रखी गयी है। अस्थायी अस्थायी असमर्थता की दशा में यदि ऐसी असमर्थता दुर्घटना का दिन छोडकर तीन दिन से अधिक रहती है। असमर्थता लाभ पूर्ण दर के बराबर असमर्थता के दौरान अवधिक भुगतान के रूप मे दिया जायेगा

आश्रित लाभ – यदि कोई बीमा दा व्यक्ति किसी व्यवसायिक चोट के फलस्वरूप मर जाता है तो अधिनियम के अन्तर्गत जिन आश्रितो को क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार है। उन्हे आवधिक भुगतान दिया जायेगा जिसे आश्रित लाभ कहा जायेगा। आक्षित्र लाभ निम्नलिखित दरो पर आश्रितो को मिलेगा मृतक के हर जायज या गोद लिए गये पुत्र या जायज अविवाहित पुत्री को 15 वर्ष की उम्र तक इस लाभ को जारी रखा जा सकता है। यदि 18 वर्ष की उम्र उक इस लाभ को जारी रखा जा सकता है। यदि पुत्र या पुत्री की कापोरेशन को संतुष्ट करने वाली शिक्षा जारी रहती है।

4 डॉक्टरी या चिकित्सालय लाभः– इस लाभ की व्यवस्था सबसे अधिक महत्व की है। क्यो यह लाभ वह घुरी है। जिस पर सारी प्रणली धूमती है। यदि किसी बीमारशुदा व्यक्ति या उसके परिवार के किसी सदस्य यदि डॉक्टरी लाभ बीमारशुदा व्यक्ति के परिवार को भी दिया जाता है। की दशा ऐसी हैं कि उसे डॉक्टरी इलाज या सेवा की आवश्यता है। तो वह उसे यह लाभ पाने का अधिकार होता है। यह लाभ बीमारी व्यवसायिक चोट या प्रसूति की दिशा में बिना किसी शुल्क के डॉक्टरी इलाज के रूप में होता है।

कोयला खान भविष्यनिधि एवं विविध व्यवस्थाएं अधिनियम – यह भविष्य निधि योजना पं बंगाल और विहार मे सभी कोयला खानो में लागू की गयी जो बाद में धीरे धीरे मध्य प्रदेश असम उडीसा महाराष्ट्र सहित सारे भारत की कोयला खानो में भी लागू कर दी गयी इस समय इस योजना के अन्तर्गत 1001 कोयला खाने तथा सहायक संगठनों में 6 लाख 78 हजार श्रमिक सदस्य है इस समय देश के विभिन्न कोयला क्षेत्रो में सदस्यों द्वारा कोष मे पर्याप्त अंशदान की दर श्रमिकों की कुल आमदनी का 8 प्रतिशत कर दिया वे चाहे तो अपने अनिवार्य अशंदान के अलावा 8 प्रतिशत कर दिया गया तथा सेवा योजको का अंशदान इसके बराबर रहता है। जून 1963 से सदस्यो के लिए यह ऐच्छिक कर दिया हैं कि यदि वे चाहें तो अपने अनिवार्य अंशदान के अलावा 8 प्रतिशत की दर से अधिक अंशदान नही देना होता कोष की उस रकम के विनियोग का स्वरूप जो बहार जाने वाले सदस्यों की वापसी के लिए तुरंत आवश्यक नही होती ट्रस्टी बोर्ड द्वारा निर्धारण किया गया है। किसी सदस्य की सेवा से निवत्ति की आयु छटनी कार्य के लिए पूर्ण असमर्थता अथवा उसकी मृत्यु की दशा में वह कोष मे से व्याज सहित अपने जमा में पडी हुई सारी इकट्ठा हुई रकम वापस ले सकता है। दूसरी दशाओं में श्रमिक के प्रति देय सेवा योजक के

अशंदान का एक भाग सदस्यता की अवधि के आधार पर इस अशंदान का एक भाग सदस्यता की अवधि के आधार पर इस प्रकार काटा जाता है। यदि सदस्यता की अवधि तीन वर्ष से कम है। तो 50 प्रतिशत या अधिक किंतु 10 वर्षो से कम है। तो 25 प्रतिशत से अधिक कितु 15 वर्ष से कम है। तो 15 प्रतिशत अंशदान व्याज सहित काट लिया जायेगा जहाँ सदस्यता की अवधि 15 वर्ष या इससे अधिक है। वहाँ कुछ नही काटा जायेगा काटी गयी रकम का उपयोग सदस्यों के कल्याण के लिए किया जाता है। योजनाओं के अंतर्गत सदस्यों के कोष अपनी इकटठी हुई रकम मे से सहाकारी समितियों के अंश खरीदने मकान बनवाने जीवन बीमा पॉलिसी का प्रीमियम देन तथा पुत्रियों की शादी तथा बच्चो को उची शिक्षा के लिए न लौटने वाले अग्रिमो के दिये जाने की व्यवस्था है। कोयला खानो के ओशिक रूप से बंद होने वाले के कारण बेरोजगारी या आंशिक रोजगार की दशा में लागू कर दी गयी है।

कर्मचारी भविष्य निधि एवं विविध व्यवस्थाएं अधिनियम 1952 – आरंभ में इस अधिनियम के प्रावधान 6 उद्योगो मे से 50 या अधिक व्यक्तियो को नियुक्त करने वाले कारखाने पर लागू होतें थें बाद में यह अन्य दूसरे उद्योगों पर लागू होतें है। बाद में यह अन्य दूसरे उद्योगो पर लागू कर दिए गए 1956 के 20 से अधिक से संशोधन के अनुसार सरकार को यह अधिकार को यह अधिकार है कि वह इसे गैर कारखानो मे लागू कर सकती है। 1960 के संशोधन में अधिनियम के सीमा क्षेत्र को 20 से अधिक व्यक्ति नियुक्त करने वाले 5 वर्षो से काम कर रहें संस्थाओ पर भी लागू कर दिया है। इस बात की व्यवस्था की गयी कि अधिनियम के क्षेत्र में जो संस्थाएं एक बार में शामिल हो जाए वे श्रमिकों की संख्या में कमी होने के आधार पर बाहर न निकल सके जब श्रमिको की संख्या 15 से कम हो जाती है और एक वर्ष की अवधि तक इसी तरह बनी रहती है। तो इकाई अधिनियम के सीमा क्षेत्र से बाहर हो सकती है। आरंभ में इस योजना के सदस्य केवल कर्मचारी हो सकते है। जिनका मासिक वेतन 300 रूप्ये से अधिक नही था 31 मार्च 1957 से इस 1000 रू प्रति माह कर दिया गया वर्तमान में यह सीमा 1600 रू प्रति माह है। इस योजना में कर्मचारी के वेतन का 8 प्रतिशत बंदे के रूप मे काटा जाता है। तथा इतना ही सेवा योजनाको द्वारा दिया जाता है। 1 जनवरी 1964 से एक मृत्यु सहायता कोष स्थापित किया जिससे कम से कम 500 रूपये की सहायता उन मृत्यु सदस्यो के उत्तराधिकारियो को देने की व्यवस्था की गयी थी जिनकी युद की इकटठा हुई रकम इतनी हो पायी है। बाद में यह सीमा बढाकर 740 रूपये उसके बाद 1000 रू0 कर दी गयी परंतु वर्तमान में यह सीमा 1250 रू0 है। अगस्त 1976 से अधिनियम के अंतर्गत आने वाले श्रमिको को जीवन बीमा देने के उद्देश्यो से कर्मचारी जमा जुडी बीमा योजना लागू की गई है।

अनुग्रह भुगतान संशोधित अधिनियम 1984 – अनुग्रह भुगतान अधिनियम 16 सितंबर 1972 से सारे भारत के प्रत्येक कारखाने खाना तेल क्षेत्र बागान बंदरगाह एवं रेलवे प्रत्येक ऐसी दुकान या संस्थान जिनमे 10 या अधिक व्यक्ति नियुक्त हो या पिछले 12 महीने में किसी दिन नियुक्त किए गए है। जिन्हें केन्द्रीय सरकार अधिक सूचना द्वारा इस सम्बंध में निर्धारित करने पर लागू होता है।

अधिनियम के अंतर्गत नियोक्ता द्वारा कर्मचारी को प्रत्येक वर्ष की सेवा पूरी होने या 6 महीने से अधिक भाग की सेवा के लिए सम्बधित कर्मचारी को मिलने वाली अंतिम मजदूरी पर आधारित 15 दिन का मजदूरी की दर से अनुग्रह रकम का भुगतान किया जायेगा

कार्यनुसार मजदूरी पानेवाले कर्मचारी की दशा में दैनिक मजदूरी की गणना इसके रोजगार खत्म होने से पहले के तीन महीनो मे मिलने वाली कुछ मजदूरी के अवसर से की जायेगी और इस उद्देश्य के लिए किसी अतिरिक्त समय के लिए दी गई मजदूरी को शामिल नही किया जायेगा किसी कर्मचारी को दी जाने वाली अनुग्रह रकम की कुल मात्रा 20 महीने की मजदूरी से अधिक नही होगी यदि किसी कर्मचारी को मजदूरी से अधिक नहीं होगी यादि किसी कर्मचारी की संपत्ति को हानि की सीमा तक असकी अनुग्रह रकम अपहरति का ली जायेगी इस समय 34 हजार संस्थाओं के 30 लाख से अधिक कर्मचारी इस योजना के अंतर्गत आ चुकें है।

जमा समबद्ध बीमा योजना – यह योजना 1 अगस्त 1976 से उन कर्मचारियो श्रमिको पर लागू गई है। कर्मचारी भविष्यनिधि योजना व कोयला खान भविष्य निधि योजनाएं के अंतर्गत आते है। इस योजना के अंतर्गत आने वाले किसी कर्मचारी की आय पर मृतक के परिवार को भविष्य निधि में पिछले 3 वर्ष बकाया औसत राशि के बराबर राशि कर जाती है लेकिन यह राशि 10000 रू0 से अधिक नही हो सकती इस योजना की विशेषता है कि इसमे कर्मचारी व श्रमिको को कुछ भी नही देना पड़ता है। इसमें सरकार व मालिक को ही देना पडता है।

सामाजिक सुरक्षा सर्टीफिकेट – यह योजना 1 जून 1982 से लागू की गयी है। इसमें कोई व्यक्ति जिसकी उम्र 18 वर्ष व 45 वर्ष के बीच है। इन सर्टीफिकेटो को कयाकल्प सकता है। लेकिन एक व्यक्ति अधिक से अधिक पाँच हजार के ही सर्टीफिकेट क्रय कर सकता है। यह सर्टीफिकेंट 500 व 1000 के है जिनका भुगतान वर्ष बाद क्रमशः 1500 व 3000 होगा लेकिन यदि सर्टीफिकेट क्रेता क्रय करने के 2 वर्ष पश्चात मर जाता है। तो उसके कानूनी उत्तराधिकारी को सर्टीफिकेट की पूरी रकम तुरंत देय हो जाती है। और उसको देय तिथी तक भुगतान के लिए इंतजार नही करना पड़ता है।

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का एकीकरण – पिछले कुछ समय से यह अनुभव किया जाने लगा है। कि अब एक मिली जुली सामाजिक सुरक्षा योजना तैयार करना संभव हो सकेगा जो वर्तमान अंशदान को थोडा बढाकर कुछ ऐसे जोखिम को विरूद्ध सुरक्षा दे सके जिन्हें वर्तमान समय मे शामिल नही किया गया हैं भारत सरकार की बेकारी सहायता

योजना लागू करने एवं प्रशासन कार्यों को कम करने के लिए कर्मचारी निधि योजना कर्मचारी राज्य बीमा योजना को एक मे मिलाने की कोशिश कर्मचारी राज्य बीमा योजना समीक्षा समिति की एक महत्वपूर्ण सिफारिश के अनुसार है।

श्रम कल्याण से आशय

श्रम कल्याण कार्यो से तात्पर्य उन क्रियाकलापो से होता है। जिनके द्वारा श्रमिको का जीवन सुखयम हो जाता है। और जिनमें श्रमिको की कार्यकुशलता में वृद्धि की जाती है। श्रम कल्याण कार्य धारणा को विभिन्न अर्थो मे प्रयुक्त किया जाता है और देश कार्य तथा परिस्थितियो के अनुसार इसके महत्व में भी भिन्नता पायी जाती है। वस्तुत श्रम कल्याण की धारणा उतनी लचीली है। कि इसकी परिभाषा देना अत्यन्त कठिन कार्य है।

श्रम कल्याण का अर्थ एवं परिभाषाएं

शाही श्रम आयोग ने लिखा है श्रम कल्याण एक ऐसा शब्द है। जो बहुत ही लचीला है। इसका अर्थ एक देश की तुलना में उसकी विभिन्न सामाजिक नीतियो औद्योगिकरण की स्थिति में व श्रमिको की शिक्षा सम्बंधी प्रगति के अनुसार भिन्न भिन्न लगाया जाता है। सर एड वर्द्ध पेटन के अनुसार श्रम कल्याण कार्यो से तात्पर्य श्रम के सुख स्वास्थ्य एवं समृद्धि के लिए उपलब्ध की जाने वाली दशाओं से है।

ई0 टी0 कैली के अनूसार – श्रम कल्याण से तात्पर्य किसी प्रतिष्ठान द्वारा श्रमिकों के व्यवहार और के लिए कुछ नियमो का अपनाया जाना है।

ई० एम० ग्राउण्ड के अनुसार – श्रम कल्याण से तात्पर्य विद्यमान औधोगिक प्रणाली तथा अपनी फैक्ट्रियो रोजगार की दशाओ को उन्नत करने के लिए मालिको द्वारा किए गए ऐच्छिक प्रयत्नो से है।

एन० एम० जोशी के अनुसार – श्रम कल्याण के अंतर्गत हम श्रमिको के लाभ के लिए मालिको द्वारा किए गए प्रयत्नो तथा कारखाना अधिनियम के अंतर्गत कार्य करने की न्यूनतम दशाओं के आदर्श तथा दुर्घटना वृद्वावस्था बेकारी और बीमारी के लिए पास किए गए सामाजिक विधान को सम्मिलित कर सकतें है।

3.2 श्रम कल्याण कार्य के अंग

1 स्थान की दृष्टि से वर्गीकरण

- कारखाने के अंदर कार्य कल्याण कार्य
- कारखाने के बाहर का कल्याणकार्य

2 प्रबंध की दृष्टि से वर्गीकरण

- कानून श्रम कल्याण
- ऐच्छिक श्रम कल्याण
- पारस्परिक श्रम कल्याण

3 प्रदान करने वाले संगठन की दृष्टि से वर्गीकरण

- सेवायोजको द्वारा
- सरकार द्वारा
- मजदूर संघ द्वारा
- समाज की अन्य संस्थाओं द्वारा

स्थान की दृष्टि से वर्गीकरण– ब्राउण्ट ने श्रमिक कल्याण के कार्यो को दो भागो में बॉटा है।

कारखाने के अंदर का कल्याण कार्य – बैज्ञानिक भर्ती श्रमिकों की भर्ती वैज्ञानिक ढंग से करना औद्योगिक प्रशिक्षण विभिन्न कारखानो मे विशिष्ट कार्यो का प्रशिक्षण स्वच्छता

प्रकाश तथा वायु का प्रबंध इससे कारखाने में सफाई पुताई रोशनदानो का प्रबंध पीने के पानी का प्रबंध स्नानग्रह संडास मूत्रालय आदि की व्यवस्था रोशनी का प्रबंध तथा सर्दी को कम करने की व्यवस्थाएं आती है।

दुर्घटनाओं की रोकथाम – इसमें खतरनाक यंत्रो अतःयधिक ताप आदि से बचाव तथा आग बुझाने का प्रबंध आदि सम्मिलित अन्य कार्य जैसे कैण्टीन थकावट दूर करने की व्यवस्था आराम की व्यवस्था आदि।

- कारखानो के बहार का कल्याण कार्य– सस्ते तथा पोषक युक्त भोजन की व्यवस्था।
- मनोरंजन की सुविधाएं क्लब अखाडे सिनेमा रेडियो आदि
- शिक्षा का प्रबंध इसमें प्रौढ शिक्षा सामाजिक शिक्षा प्राथमिक शिक्षा स्त्री पुरूष बालको की शिक्षा आदि आती है।
- चिकित्सा व्यवस्था इसमें आराम अवकाश मुक्त उपचार आदि
- उत्तम आवासों की व्यवस्था

2 प्रबंध की दृष्टि से वर्गीकरण

कानूनी श्रम कल्याण – कानूनी श्रम कल्याण कार्यों से तात्पर्य उन समस्त कार्यों से है। जो श्रमिकों के हित के लिए सरकार की ओर से विभिन्न कानूनो के रूप में किए जातें है।

ऐच्छिक श्रम कल्याण – इस वर्ग में वे कल्याण आतें है। जिनको करना कानून न आवश्यक नही होता है। परंतु उद्योगपति इनको सेवा भावना अथवा सार्वजनिक हित के उद्देश्य से स्वयं करते है।

पारस्परिक श्रम कल्याण – कभी कभी उद्योगपति मजदूरी तथा अन्य दल भी परस्पर हित के लिए एक दूसरे की सहायता करके श्रम कल्याण की सेवाओ की व्यवस्था करतें है। उद्योगपतियों और मजदूरों और दोनो का बहुधा सहयोग इनक कार्यों में होता है।

3. प्रदान करने वाले संगठन की दृष्टि से वर्गीकरणः

सेवायोजको द्वारा – मजदूरी के अतिरिक्त ऐच्छिक रूप में दिया जाने वाला लाभ इस वर्ग में आता है। जैसे निवास जलपान यातायात आदि की सुविधा

सरकार द्वारा– अनेक राज्य सरकारो ने मजदूरो की है। उन्नति के लिए व्यवस्था की है वह इस श्रेणी ही है।

मजदूर संघ द्वारा – श्रमिक संघो का भी यह कर्तव्य है कि सदस्यो के लिए कुछ कल्याणकारी कार्य करे कुछ श्रमिक संघ चिकित्सा अदि की भी व्यवस्था करतें है।

समाज की अन्य संस्थाओं द्वारा – अनेको धनी व्यक्ति संस्थाओं आदि भी श्रमिको के लिए शिक्षा अस्पताल आदि खुलवातें है। वे इस वर्ग में आतें है।

श्रम कल्याण कार्यों की आवश्यकता

श्रमिको मे उत्तरदायित्व की भावना जाग्रत करने में सहायता होता है। जिससे राष्ट्र को अच्छे श्रमिक मिलते है।

यह एक मानवीय कार्य है। जिसके द्वारा श्रमिको को पूर्ण तथा आसमवायक जीवन मिलता हैं इससे श्रमिक की कार्यकुशलता तथा कार्यक्षमता में वृद्धि की जाती है।

इस से श्रमिको का मानसिक तथा नैतिक विकास किया जाता है।

इस से श्रमिक की क्षमता तथापूर्ति की वृद्धि करने तथा उनमें संगठन प्रवृत्ति कम करने की दिशा में लाभदायक होता है।

श्रम कल्याण का महत्व – श्रमिको की प्रवासी प्रवृत्ति अनुपस्थिति एवं दुलर्भ लाभ सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण भारतीय श्रमिको की प्रवासी प्रवृत्ति का मूल कारण यह है। कि शहरो में उन्हे अनेक सुविधाओं का समानता करना पड़ता है। जैसे बुरी आवास व्यवस्था खुले वातावरण का प्रभाव तथा खाने पीने का कष्ट आदि श्रम कल्याण कार्यो के फलस्वरूप श्रमिको के रहने के लिए मकान स्वास्थ प्रद सस्ता भोजन तथा बीमारी में दवा मिल सकेगी तथा सपरिवार सुखी से रह सकेंगी

श्रम कल्याण कार्यों का सामाजिक महत्व – श्रम कल्याण कार्यो के द्वारा सामाजिक लाभ भी होता है। जैसे कैंटीन की व्यवस्था जहाँ श्रमिकों को स्वच्छ व संतुलित भोजन मिल सकता है। श्रमिको के स्वास्थ्य में सुधार करती है। स्वास्थ्य मनोरंजन के द्वारा उनकी बुरी आदतें जैसे मदिरापान जुआ खेलना आदि दूर हो जाती है तथा उनमे स्वस्थ्य आदर्श चारित्रिक विकास होता है।

कुशलता में वृद्धिः– श्रम कल्याण कार्यो से श्रमिको के कार्यकुशलता में वृद्वि होती है। क्योकि अनेक प्रकार से उनका मानसिक और बौद्धिक विकास होता है तथा उनकी कई परेशानियां दूर हो जाती है।

श्रमिको के उत्तरदायित्व में वृद्धिः – श्रम कल्याण के कार्य की व्यवस्था से श्रमिको को यह अनुभव होने लगता है। कि वे उद्योग के हिस्सेदार है। इसलिए वे संस्था के कार्य में विशेष रूचि लेने लगने है।

औद्योगिक शांति की व्यवस्था – श्रम कल्याण औद्योगिक कल्याण की व्यवस्था में सहायक होतें है। क्योकि जब श्रमिको को इस बात का अनुभव होने लगता है। कि सेवायोजक और राज्य दोनो ही उनके कल्याण के लिए अनेक योजनाएं क्रियान्वित कर रहें है। तो उनके मन में स्वस्थ भावना पैदा हो जाती है। जो औद्योगिक सम्बन्धो को मधुर बनाएं रखती है।

सेवाओ को आकर्षक बनाना – जिस औद्योगिक संस्था में श्रम कल्याण कार्य की योजना लागू होती है। वहाँ की सेवाएं अपेक्षाकृत आकर्षक हो जाती है। और अधिकांश श्रमिक वही शाक्ति में वृद्धि होती है। कार्य करना प्रसंद करतें है। इससे स्थायी श्रम श्रम संगठन को शाक्तिशाली बनाने के लिए पश्चिमी देशो मे श्रमिक संघो का संगठन अतःयंन्त दृढ और विकसित है। यही कारण है। कि पाश्चात्य श्रमिक संघ अपने श्रमिको के लिए श्रम कल्याण

की पर्याप्त सुविधाएं प्रदान करतें है। परंतु भारत के श्रमिक नेता न तो संगठित है। और न उसके श्रमिक संघो की वित्तीय स्थिति हो संवोषजनक है।

प्रगतिशील देशो मे श्रम कल्याण को श्रम कल्याण औद्योगिक प्रशासन का अंग औद्योगिक प्रशासन का एक अंग स्वीकार किया गया है। अब श्रम कल्याण कार्यो का आयोजन करना उद्योगपति का उत्तरदायित्व बन गया है। इससें श्रमिक वर्ग में एक नवीन स्वाभीमान की भावना जाग्रत होती है।

राष्ट्रीय समृद्विः– देश की आर्थिक व सामाजिक समस्याओं के समाधान के उद्देश्य से हमारी राष्ट्रीय सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं का कार्यक्रम अपनाया है। प्रत्येक योजनाओ की सफलता कठोर श्रम पर निर्भर है। अतः श्रमिक ही हमारी योजना के आधार स्तभं है। श्रमिक उसी समय पूर्ण सहयोग और सदभावना से कार्य करेगें जब से समय लेगे उद्योगपति और सरकार दोनो ही उनके वर्तमान और भावी जीवन को उन्नत बनाने हेतु क्रियाशील है।

श्रमिको को शिक्षित करने के लिए – भारत में अधिकांश श्रमिक अशिक्षित है। और अपनी स्थिति और अधिकारो के प्रति जागरूक है। और अपनी स्थित और अधिकारों के प्रति जागरूक नही है। श्रम कल्याण कार्य के अंतर्गत श्रमिको को जो शिक्षा मिलेगी उससे पारिवारिक और आर्थिक समस्याओं का समाधान सरल होगा जो कि एक प्रजातांत्रिक देश के लिए आवश्यक है।

श्रम कल्याण कार्य की मदें – श्रम कल्याण कार्य की मदो की सूची काफी लंबी है। मुख्यतः इन्हें निम्नांकित भागो मे विभाजित करके स्पष्ट किया जा सकता है।

कार्यो की दशाएं – काम की दशाओ सम्बन्धो श्रम कल्याण कार्य श्रमिक की दक्षा वृद्धि में सहायक होतें है। इसके अंतर्गत निम्न कार्य सिम्मिलित किए गए है।

संवातन सामान्य स्वास्थ्य की रक्षा करने की दृष्टि से पर्याप्त प्रकाश धूप आदि प्राप्त करने तथा बढतें हुए तापक्रम तथा आर्द्रता को नियन्त्रित करने की दृष्टि से पूरी सुविधा होना अत्यन्त आवश्यक है। इस सुविधा के न होने से श्रमिक को प्राकृतिक प्रकाश प्राप्त नही हो सकता और शुद्ध वायु मिल सकती दूषित वायु निष्कासन से वातावरण को दूषित होने से बचाया जा सकता है। सूती वस्त्र उद्योग में जहाँ धूल भरे तथा नम वायु वाले वातावरण में श्रमिक को लंबे 'समय तक कार्य पडता है। रोशनदान होना अत्यन्त आवश्यकता है।

तापक्रम नियंत्रण – कार्य स्थल पर तापक्रम वांछित मात्रा तक नियंत्रित किया जाना चाहिए जिससे श्रमिको को शीघ्र थकान का अनुभव न हो तथा उसका कार्य में मन लगा रहें वातानुकूलित कमरे अथवा गर्मी में धास की टाट का प्रबंध अधिक उचित रहता है। परंतु इस दिशा में अभी तक विशेष ध्यान नही दिया गया है।

प्रकाशः कार्य स्थल पर पर्याप्त तथा जहाँ तक संभव हो प्राकृतिक प्रकाश की व्यवस्था होनी चाहिए यदि कृत्रिम प्रकाश की व्यवस्था है। वह आँखो को चकाचौध करने वाली नही होनी चाहिए भारत मे अधिकांश कारखाने के भवन पुराने किस्म के बने हुए है। जिनसे पर्याप्त प्रकाश की व्यवस्था हैं कार्य करतें समय गैस एवं लैम्प के प्रयासो से आग लगने का भय

बना रहता है। श्रमिक की आँखो पर जोर दुर्घटना के अवसर अधिक रहतें है। श्रमिक की आँखा पर जोर पड़ता है। तथा उसे थकान शीघ्र आ जाती है।

स्वच्छता – कारखाने में प्राय गंदगी तथा धूल पायी जाती है। इसके होने से श्रमिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। दुर्घटना में वृद्धि होती है। तथा सामान्यत कार्य दक्षता एवं अनुशासन में कमी आती है। कारखाना अधिनियम के अंतर्गत कारखानो के भीतर एवं बाहर से स्वच्छ रखने एवं बदबू सढन आदि से बचाने पर बल दिया जाता है। इसके लिए दैनिक सफाई की व्यवस्था होनी चाहिए प्रति सप्ताह फर्श की घुलाई की व्यवस्था होनी चाहिए।

कार्य के घण्टे – विभिन्न अनुसन्धानो तथा अध्ययनो का यह निष्कर्ष निकला है कि अधिक लंबे समय तक कार्य करने पर श्रमिक अधिक उत्पादन नही कर सकता है। अधिक उत्पादन के लिए कार्य का समय निश्चित होना चाहिए लंबे समय तक निरंतर कार्य करतें रहने से श्रमिक थकान अनुभव करता है। अस्वस्थ ही जाता है। कार्य के प्रति असच तथा ग्लानि अनुभव करने लगाता है। तथा कार्य से भगने की सोचता है। इन सभी कारणो से कार्य पर दुधर्टना बढती है। कार्यक्षमता कम होती है। अनुपस्थिति की दर बढ़ जाती है। भारत में विभिन्न श्रम अधिनियमो मे श्रमिको के कार्य के घण्टे की व्यवस्था की गयी है। इनका पालन किया जाना चाहिए।

अच्छे कार्य की दशाएं तथा नियन्त्रित कार्य के घण्टे श्रमिक को कार्य के प्रति संतुष्टि प्रदान करतें है। तथा उत्पादन वृद्धि करने में सहायक होते है। कार्य के घण्टो मे कमी करने मे श्रमिक थकान अनुभव नही करता है। कार्य लगन से करता है। अच्छा स्वास्थ्य बनाये रखने मे सफल होता है। उनकी कार्यदक्षता में वृद्धि होती है। तथा उत्पादन में वृद्धि होती है।

अवकाश तथा छुट्टियां – प्रत्येक श्रमिक को सप्ताह में एक दिन अवकाश दिया जाना चाहिए अवकाश का अर्थ उस दिन से है। जब कारखाना पूर्णत बंद होता है। तथा सभी कर्मचारी कार्य से मुक्त रहते है। अवकाश के तीन वर्ग किए जा सकतें है।

राजकीय अवकाश रूगणंतत्र दिवस स्वतंत्रता दिवस गॉधी जयती आदि त्योहार अवकाश तथा राष्ट्रीय अवकाश विश्राम व अन्य कार्यो को करने के लिए आवश्यक है। थकान मिटाने नहाने धोने तथा सफाई छुटटी एक उपार्जित अवकाश है। जो श्रमिको को आवश्यकतानुसार दी जानी चाहिए इससे कारखाना बंद नही होता है। छुटटी हेतु कारखाना अधिनियम 1948 द्यान अधिनियम 1952 तथा बागान श्रमिक अधिनियम 1951 के अंतर्गत प्रावधान किए गए है।

शौचालय तथा मूत्रालय – कई कारखाने श्रमिक की संख्या के अनुपात में शौचालय तथा शौचालय तथा मूत्रालय बनवाते है। इसमें यह विशेषता है कि इनकी बनावट सुगम है किंतु इन्हे स्वच्छ रखवाना तथा निंतर सफाई करवाना कठिन है। प्राय यह देखा जाता है। कि कई कारखानो मे नाम मात्र को उपलब्ध रहते है। किंतु इनकी स्वच्छता की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है। स्त्रियों एवं पुरूषों के लिए अलग अलग शौचालय एवं मंत्रालय की व्यवरथा होनी चाहिए शौचालय साफ करने वाले या पानी वाले या फलश विधि से साफ होने चाहिए भारत में इस प्रकार की व्यवस्था अभी तक बहुत कम है।

पेय जल –रवत्तक तथा ठण्डा पेय जल उपलब्ध करना नियोक्ता का महत्वपूर्ण कार्य है। श्रमिक कम से कम 8 घण्टे तक कारखाने में रहता है। इस लंबे काल में उसे पेय जल की आवश्यकता पड़ती है। यदि पेय जल की उचित व्यवस्था न हो तो श्रमिक का या तो स्वास्थ्य विगडता है अथवा यदि वह जल पीने कही अन्यत्र जाता है। जिससे उसका समय नष्ट होता है। जिससे उत्पादकता में बाधा आती है। कई कारखानों में केवल नल द्वारा पानी पीने की व्यवस्था होती है। उसे उचित व्यवस्था नहीं कहा जा सकता क्योंकि इससे ग्रीष्माकाल मे श्रमिक को ठण्डा पानी उपलब्ध नहीं होता है। कहीं कही मटको द्वारा ठण्डे पानी की व्यवस्था की जाती है तो उनके देख रेख के अभाव में कई बार मटके खाली पाये जाते है।

चिकित्सा सुविधाएं –कारखाना अधिनियम 1948 के अन्तर्गत 15 से 17 वर्ष के श्रमिको का सामाजिक स्वास्थ्य परीक्षण होना चाहिए जहाँ कारखाना का स्वयं कोई चिकित्सक नही है। वहाँ अन्यन्त इस प्रकार का परीक्षण का आयोजन किया जाना चाहिए प्रयेक कारखाने मे प्राथमिक चिकित्सा सेवा उपलब्ध होना चाहिए जहाँ 500 से अधिक श्रमिक कार्यरत है यहाँ रोगी वाहनो की व्यवस्था होना चाहिए भारत में चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध करना राज्य सरकार का उत्तरदायित्व हैं किंतु फिर भी कुछ नियोक्ताओं द्वारा यह सुविधा की जाने लगी है। भारत में सर्वत्र यह सुविधा एक सी नही है। कुछ नियोक्ता अंशकालीन चिकित्साको की सेवाएं भी प्राप्त करतें है। जो पाक्षिक या साप्ताहिक रूप से श्रमिको की जाँच करतें है। वकिधम एवं कर्नाटक मिल्स असम आयल कंपनी आदि।

आवासीय सुविधाएं– औद्योगिक विकास के साथ साथ आवास समस्या जटिल होती है। श्रमिकों को रहने के लिए उचित मकान प्राप्त होती जा रही श्रमिको को रहने के लिए उचित मकान प्राप्त नहीं होतें अतः कई इकाइयों द्वारा सहकारी समीतियों आदि के मध्य से निम्न 8 आवासीय योजना पर आर्थिक सुविधा दी जा रही है।

शिक्षा सम्बंधी सुविधाएं शाही श्रम आयोग – ने बताया कि भारत मे लगभग सभी वर्ग के श्रमिक अशिक्षित है। इस अयोग्यता का मजदूरी उत्पादन संगठन तथा कुछ अन्य बातो पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है। यह बताना कठिन है। कुछ उदार नियोक्ता पौढ शिक्षा कक्षाएं तथा वस्तकारी प्रशिक्षण कक्षाएं जैसे सिलाई कशीदाकारी बुनाई आदि के कार्यक्रम चलातें है।

मनोरंजन –मनोरंजन की दृष्टि से श्रम कल्याण कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है इससे लंबे काल तक कार्य करने के उपरांत उपलब्ध अन्य मनस्कता तथा उदासी से मुक्ती है। औसत श्रमिक गर्मी धूल शोरगुल आदि वातवारण में कार्य करता है अतः कार्य की एक रसता कम करने के लिए मनोरंजन आवश्यक पूर्णत ऐच्छिक कार्य है।

नहाने तथा कपडे धोने की सुविधाएँ– कारखाना अधिनियम अंतर्गत यह प्रावधान हैं कि कोई कारखाना जिससे श्रमिकों की सहायता से उत्पादन कार्य किया जाता है और कोई हानिप्रद कच्चा माल प्रयोग किया जाता है। तो वहाँ श्रमिको को नहाने एवं कपडा धोने की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए लगभग सभी इकाइयों नहाने एवं कपडा धोने की सुविधा प्रदान करती है। किंतु सावुन सोडा एवं तौलिये बहुत कम नियोक्ता उपलब्ध करातें हैं श्रम पर राजकीय आयोग की रिर्पोट के अनुसार ऐसे लोगो को जो गंदें स्थानो पर अथवा बहुत

भीड वाले स्थानो मे निवास करतें है। नियोक्ता द्वारा नहाने धोने की सुविधा प्रदान करने पर अनेक आराम स्वास्थ्य तथा दक्षता में वृद्धि होती है।

विश्राम स्थल – कार्य के उपरांत की छुट्टी अथवा खाना खाने के समय श्रमिकों के लिए कार्य स्थल से अलग एक विश्राम स्थल होना चाहिए जहाँ श्रमिक आपस में मिल जूल कर बैठे सके गपशय कर सके तथा सुस्ता सकें अनियमित कारखाने इस प्रकार का प्रावधान नही करतें किंतु नियमित एवं संगठित उद्योगो विश्राम स्थल का निर्माण बैधानिक आवश्यकता है। इन स्थानो का निर्माण जहाँ भी किया जाता है। वह उपेक्षित दृष्टि से किया जाता है।

शिशु ग्रह – कारखाना खान व बागान अधिनियम के अंतर्गत स्त्री श्रमिको के 6 वर्ष से छोटे शिशुओं के लिए शिशु ग्रह की व्यवस्था का प्रावधान है जिनमे 50 या इससे अधिक स्त्रियो कार्य करती हो दुर्भाग्यवश इसे और अधिक ध्यान नही दिया गया है पर्याप्त स्वच्छता दाइयो की सेवा तथा शिशु ग्रह की सुविधा आदि की दृष्टि से स्त्री नियोक्ता इस ओर पर्याप्त ध्यान देने लगे है। उन शिष्ठा ग्रहो में पर्याप्त चारपाइयां दरियां गद्रदे खिलौने चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध है।

श्रम संघो का अर्थ एवं परिभाषा

आधुनिक औद्योगिक समाज में श्रम संघो का अत्यन्त की महत्वपूर्ण स्थान है। वे देश के आर्थिक सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन को कई तरह से प्रभावित्त करतें है। मजदूरी अजीवको के स्थायी वर्ग में आने वाले श्रमिको की संख्या में वृद्धि औद्योगिक एवं आर्थिक विकास तथा सामूहिक प्रयासो के बढतें हुए महत्व के कारण श्रम संघो की भूमिका भी निरंतर महत्वपूर्ण हाती गयी है। श्रम संघ कई प्रकार के होतें है। श्रमिक संघो की स्थापना और उद्देश्य के सम्बध मे विभिन्न विचार को ने भिन्न भिन्न मत व्यक्त किए है। श्रमिक आंदोलन का क्षेत्र श्रमिक संघ आंदोलन की अपेक्षा अधिक विस्तुत है।

शब्द से समझातें सिडनी और बेटाट्रिस के अनुसार – जैसे कि हम श्रम संघ मजदूरी अजीवको का एक अवरत संघ है। जिसका उद्देश्य उनके कार्य करी जीवन की दशाओं को अनुरक्षित करना या उनमें सुधार लाना है।

बी० बी० गिरी० के अनुसार – श्रमिक संघ श्रमिको का ऐच्छिक संगठन है। जो इसके सदस्यो का स्तर सुधारने तथा कार्य की दशाएं सुधारने का कार्य करता है।

श्रम आंदोलन परिणाम है। परिणाम है और मशीन उसका फेक टनेबाम के अनुसार – मुख्या कारण है।

आर० ए० लेस्टर के अनुसार – श्रमिक संघ कर्मचारियों का एक संगठन है। जो इसके सदस्यों का स्तर सुधारने तथा कार्य की दशाएं सुधारने का कार्य करता है।

ए०सी०जोन्स के अनुसार – एक श्रमिक संघ अनिवार्य रूप से श्रमिको का ही संगठन हे। नियोजको सहभागियों अथवा स्वतंत्र श्रमिको का नहीं

लेस्टर के अनुसार – यह एक ऐसी संस्था है। जिसका निर्माण अपने सदस्यो को रोजगार की दशाओं में सुधार करने तथा उन्हें बनाएं रखने के उद्देश्यो से किया जाता है।

श्रम संघो के प्रकार – श्रम संघ कई प्रकार के होतें है विभिन्न आधारो पर श्रम संघ के निम्नलिखित प्रकार है।

1 सदस्यता की प्रकृति के आधार पर वगीकरणः– सदस्यता की प्रकृति के आधार पर श्रम संघ मुख्यत तीन प्रकार के होतें है।

- शिल्पी संघ
- औद्योगिक संघ
- सामान्य संघ

शिल्पी संघ – शिल्पी संघ ऐसा श्रम संघ है। जिसके सदस्य किसी एक ही शिल्प या व्यवसाय मे काम करने वाले श्रमिक होतें है। कई प्रतिष्ठानो उद्योगो या स्थानो में एक ही शिल्प मे काम करने वाले श्रमिक मिल कर बनातें है। शिल्पी संघ स्थानीय क्षेत्रीय या राष्ट्रीय स्तर पर बनाए जा सकतें है। बढईयो जुलाहो शिक्षको तथा बस चालको के संघ शिल्पी संघ के उदाहरण है। अधिकांश शिल्पी संघ कुशल श्रमिको द्वारा बनाए जातें है संयुक्त राज्य अमेरिका में कई शिल्पी संघ बनाए गयें है। वहाँ का इंटरनेशनल बुडकार्वर्स एसोशियन एक शक्तिशाली शिल्पी संघ है। भारत में शिल्पो संघो की संख्या बहुत ही कम है। कभी कभी कई समान शिल्पो के श्रमिक मिलकर अपने संघ बना लेतें है। जिन्हे बहुविधि शिल्पी संघ कहतें है।

औद्योगिक संघ – जब किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान या संघ में काम करने वाले विभिन्न श्रेणियों के श्रमिक मिलकर अपना संघ बनातें है। तो उसे औद्योगिक संघ कहतें है। इस प्रकार के संघ में किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान या उद्योग में कार्यरत सभी प्रकाश के श्रमिक होतें है चाहे व कुशल हो अकुशल या एक शिल्प या व्यवसाय में काम करतें हो या दूसरे में इस प्रकार के संघ प्रतिष्ठान क्षेत्र उद्योग के स्तरो पर बनाए जा सकतें है अगर बांटा कंपनी में कार्यरत सभी श्रेणी के श्रमिक मिलकार अपना संघ बनातें है। तो उसे औद्योगिक संघ कहा जाएगा भारत में अधिकाश श्रमिक संघ औद्योगिक संघ है। औद्योगिक संघ के उदाहरण हे। जैसे रायवर्क्स यूनियन कोयला खदान मजदूर संघ इण्डियन नेशनल टेक्सटाइल बक्स फेडरेशन भारत में औद्योगिक संघ के प्रमुख उदाहरण है।

सामान्य संघ – जब विभिन्न शिल्पो व्यवसायो प्रतिष्ठानो उद्योगो तथा नियोजका मे कार्यरत श्रमिक बिना किसी भेद भाव के मिलकार कोई संघ बनातें है। तब उस सामान्य संघ कहतें हैं उदाहरणर्थ यदि किसी शहर में कार्य करने वाले बढई लोहार विक्रेता छापाखानो होटलो आदि के कर्मचारी मिलकर कोई संघ बनाते है तब उसे सामान्य सदा कहा जाएगा सामान्य संघ मे सिर्फ व्यवासाय उद्योग प्रतिष्ठान आदि के आधार पर सदस्यता में भेदभाव नही किया जाता है। सामान्य संघो की स्थापना के लिए श्रमिको के बीच अपनी अलग अलग औद्योगिक विशिष्टताः को त्यागने की आवश्यकता होती है। ब्रिटेन का ट्रांसपोर्ट एण्ड व्यागने की आवश्यकता होती है। संघ का उदाहरण है सामान्य संघ में कई

उद्योगो या प्रतिष्ठानो के श्रमिकों सम्मिलित होते है। तो कभी केवल की उद्योगो या प्रतिष्ठानों के श्रमिक

भागौलिक कार्य क्षेत्र के आधार पर वर्गीकरण– भौगोलिक कार्य क्षेत्र के आधार पर श्रमिक संघों को निम्न चार श्रेणियों में रखा गया है–

स्थानीय श्रमिक संघ–स्थानीय श्रमिक संघ व होतें है। जिनका कार्यक्षेत्र किसी भौगोलिक या स्थानीय क्षेत्र तक सीमित रहता है। छोटे छोटे उद्योग एवं नियोजको मे काम करने वाले श्रमिक के संघ सामान्यत स्थानीय श्रमिक संघ होतें है। कई राष्ट्रीय श्रमिक संघों की स्थानीय शाखायें भी होती हैं।

राष्ट्रीय श्रमिक संघ– कई श्रमिक संघ राष्ट्रीय स्तर पर भी बनाए जातें है। भारत मे राष्ट्रीय श्रमिक संघ के उदाहरण है। इण्डियन नेशनल टेड कांग्रेस यूनियन ऑल इण्डिया टेड फेडरेशन आदि ब्रिटेन मे नेशनल टैक्सटाइल वर्क्स तथा नेशनल यूनियन पोस्ट ऑफिस वर्क्स राष्ट्रीय स्तर के श्रमिक संघ है। उदाहरण है। यूनाइटेड ब्रदर हुंड ऑफ राष्ट्रीय स्तर पर श्रमिक के महत्वपूर्ण संघ है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ – कुछ श्रमिक संघ अतःर्राष्ट्रीय स्तर पर भी बनाए जातें है। इस प्रकार के श्रमिक संघ के उदाहरण है। जैसे इण्टरनेशनल कॉन्फेडरेशन ऑफ फ्री टेड यूनियन तथा वर्ड फेंडरेशन आफ टेड यूनीयनस

क्षेत्रीय श्रमिक संघ– कभी कभी विशेष भौगोलिक क्षेत्रों में कार्यरत श्रमिक अपने क्षेत्रीय श्रमिक संघ बनातें है। भारनत में दक्षिण भारत तथा असम के बागानो मे कार्यरत श्रमिको तथा चीनी उद्योगो के श्रमिको न अपने क्षेत्रीय संघ बनाएं है।

सत्ता के विकेंद्री करण केदीकरण के स्वरूप के आधार पर वर्गीकरण – इस आधार पर श्रमिक संघो के दो मुख्या भेद होतें है।

- संघात्मक श्रमिक संघ
- एकात्मक श्रमिक संघ

संघात्मक श्रमिक संघो मे सत्ता महासंघ के उच्चतम स्तर तथा संघ के सदस्य के रूप में शामिल इकाइयो के बीच वित्तरित रहती है। जैसे इण्डियन नेशलन आयरन एण्ड स्टीज बर्क्स फंडरेशन तथा इण्डियन नेशनल माइन वर्क्स फेडरेशन भारत मे संघात्मक श्रमिक संघ के उदाहरण है। तथा ब्रिटेन का नेशानल यूनियन ऑफ बूट एण्ड शूज आवरेटक्स तथा नेशनल यूनियन ऑफटेलरिंग एण्ड गारमेण्टस वर्ग एकात्मक श्रमिक संघ के उदाहरण है।

शासन की प्रकृति के आधार पर बर्गीकरण– इस आधार पर श्रमिक संघो को दो मुख्य श्रेणियो मे रखा जाता है। स्वेच्छाचारी श्रमिक संघ के नेता या पदाधिकारी सदस्यों के विचार या भावनाओ की ध्यान में रखे विना मनमाने ढंग से कार्य करते है। प्रजातांत्रिक श्रमिक संघो में क्रियाकलाप के संचालन में भाग लेने का उचित अवसर मिलता है।

अन्य प्रकार – श्रमिक संघ के कुछ अन्य प्रकारो का भी उल्लेख किया जाता है।

- कंपनी संघ
- व्यापारिक संघ
- क्रांतिकारी संघ

श्रम संघ के उद्देश्य एवं कार्य

आधुनिक युग में जीवन संघर्ष प्रत्येक क्षेत्र में है। आत्यधिक जटिल हो गया है। पूँजीपति श्रमिक के शोषण के लिए प्रयत्नशील रहतें है। श्रमिको और पूँजीपति मे श्रमिक का पक्ष अपेक्षाकृत कम शक्तिशाली होने से श्रमिको का सदैव पूँजीपतियो द्वारा हमेशा शोषण होता है। श्रमिको की इस निवेलता के कारण ही उनमें संगठन की आवश्यकता प्रतीत हुई औरश्रमिक संघ व्यवस्था का विकास और जन्म हुआ इसी आधार पर इनके उद्देश्य एवं कार्य निम्नलिखित है।

- श्रमिको एक मालिकों के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध श्रमिको एवं मालिको के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बध स्थापित करना जिससे यथा सम्भव विवाद न हो
- जीवन स्तर में वृद्धि करना श्रम संघो का उद्देश्य सदस्यों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाना है। इसके लिए वे चिकित्सा सम्बंधी शिक्षा सम्बधी वाचनलय तथा आमोद प्रमोद की सुविधाओ का प्रबंध करतें है।
- वैद्यानिक सलाह देना श्रमिको को नियोक्ता के विरूद्व वैधानिक सलाह देना और आवश्यकता होने पर उसके लिए आर्थिक सहायता देना
- औद्योगिक शांति स्थापित करना हडताल की घोषण करना उसको संगठित करना एवं चलाना और नियोक्ता से संबंद्व स्थापित कर संघर्ष को शांति से सुलझाने का प्रयत्न करना।
- योजनाये बनाना श्रमिको के लाभ के लाभ के लिये रोग बीमा प्राविडेण्ट फण्ड सहकारी संघ डॉक्टरी सहायता आदि लाभदायक योजनाओ की व्यवस्था करना।
- संपूर्ण विकास करना श्रमिको की सामाजिक आर्थिक मानसिक एवं शारीरिक उन्नति करना
- ऑकडे एकत्रित करना श्रमिक की दशाओ से संबंधित ऑकडे एकत्रित करना
- आर्थिक सहायता देना ऐसे सदस्यो की आर्थिक सहायता करना जो अपनी जीविका को विमारी दुर्घटना वृद्वावस्था सहायता देने के लिए एक स्थायी कोष स्थापित करना एकता की भावना का निर्माण करना
- श्रमिको में एकता की भावना का निर्माण और उनमें मैत्रीपूर्ण सम्बंध स्थापित करना
- उचित वेतन तथा उनकी वृद्धि श्रम संघो का उद्देश्यो यह है कि वे अपने सदस्यो को उचित वेतन दिलवाये तथा उनमें वृद्धि करे तथा उन्हें बनाएं रखे
- श्रमिको की नौकरी सुरक्षित बनी रहने का विश्वास दिलाना श्रमसंघो की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य यह है कि ये अपने सदस्यो नौकरी या काम सुरक्षित बने रहने का विश्वास दिलायें संघो का जीवन अस्तित्व ही उनके इस उद्देश्य की सफलता पर निर्भर करतें है।

- कार्य क्षमता को बढाना श्रम संघो का सदस्यों की कार्य करने की दशाओं में सुधार करके उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि करना कार्य करने दशाओं में सुधार से तात्पर्य कार्य के घण्टो को कम करना कारखाने के अंदर सफाई करना मशीनो मे होने वाली दुर्धटनाओं के विरूद्व सुरक्षात्मक कार्य कराना तथा संवेदन छुट्टियो दिलाने का प्रयास करना आदि से है।

श्रम संघो से लाभ

मानसिक विकास होना – श्रमिक संघ अपने सदस्यो को चिकित्सा मनोरंजन तथा अन्य सामाजिक सुविधाए प्रदान करतें है। जिससे श्रमिको को मानसिक संतुष्टि प्राप्त होती है। बातो को सोच सकता है। इस प्रकार श्रमिको का मानसिक दृष्टिकोण विकसित होता है।

औद्योगिक उत्पादन में हानि नही होती – श्रम संघ श्रमिक वर्ग या पूँजी वर्ग के आपसी झगडो या मतभेदो को शांतिपूर्ण तरीको से तय करने की चेष्टा करतें है। इससे उत्पादन कार्य सुचारू रूप से चलता है। और देश के औद्योगिक उत्पादन की हानि नही होती

राजनीतिक प्रभुत्व – श्रम संघ श्रमिको की आवाज सरकार तक पहुॅचाने की दृष्टि से चुनाव मे अपने प्रतिनिधियो को खड़ा करते है। और इस प्रकार लोकसभा में श्रमिको का नेतृत्व करते है। और इस प्रकार लोकसभा में श्रमिको का नेतृत्व करतें है। फलतः सरकार को भी उनकी दृष्टि पर विचार करना पड़ता है। और यह नियम आदि बनाकर श्रमिको को सुविधाएं प्रदान करने का प्रयत्न करती है।

नैतिक उन्नति होना – श्रम संघ सदस्यो को शिक्षा दिलाकर उनकी मानसिक वुद्धि का विकास करतें है। इसके अतिरिक्त वे उनको संगठित होने पर अनुशासन में रहने की शिक्षा देतें है। इस प्रकार श्रमिको की नैतिक उन्नति होती है।

श्रमिका के अधिकारो की रक्षा करना – श्रम संघ श्रमिको के अधिकारों की रक्षा करता है। और आवश्यकता पडने पर उनके लिए संघर्ष करता है श्रमिको को उचित मजदूरी दिलाने का प्रयत्न करता है। और इस प्रकार श्रमिको को उचित पुरस्कार प्राप्त होता है। तो यें मन लगाकर काम करतें है। जिससे उत्पादन भी अधिक होता है।

एकता की भावना जाग्रता करना – श्रम संघो सें श्रमिको के हृदय में एकता की भावना का उदय होता है। उनमें परस्पर बधुत्व की भावना में वृद्धि एवं मित्रता एवं सहयोग की भावना का विकास होता है। फलत श्रमिको की नियोक्ता से सौदा करने की शक्ति बढ़ जाती है। जिससे नियोक्ता शोषण नही कर पातें

जीवन स्तर का ऊचा होना – श्रम संघ श्रमिको की शारीरिक मानसिक आर्थिक एवं सामाजिक दशा सुधार की दृष्टि से सतत प्रयत्नशील रहतें है। जिससे श्रमिको का जीवन स्तर उच्च बनाया जाता है। और उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि हो जाती है।

श्रम संघो से हानियां

1. समाज की हानि – राष्ट्रीय उत्पादन कम हो जाने से वस्तुओं के मूल्य बढ जातें है। फलस्वरूप उपभोक्तागण अधिक वस्तुओं का उपभोग नही कर पातें है और उनके रहन सहन का स्तर गिर जाता है।

2. प्रशासन में असुविधा – कभी कभी श्रम संघो के नेताओ के मतभेद के कारण श्रम संबंधी योजनाओ असफल हो जाती है। इनके कारण प्रशासन असुविधा होती है।

3. औद्योगिक प्रगति में बाधा – श्रम संघ उद्योगो में विवेकीकरण या उत्पादन के विकसित साधनो को लागू करने का विरोध करतें है। यें प्राय मंद गति कार्य करने की नीति का समर्थन करतें है। जिससे औद्योगिक प्रगति में बाधा उपस्थित होती है। और राष्ट्रीय लाभांश भी कम होता है।

4. श्रमिक संगठन के अस्तित्व को हानि– श्रमिक संघो के विभिन्न नेताओं में आपस में पद लोलुपता के लिए झगडे हुआ करतें है। इससे श्रमिक संगठन के आंदोलन की जडे कमजोर हो जाती है। और श्रमिक वर्ग का अहित होता है।

5. औद्योगिक शांति– प्रायः श्रम संघो के नेता आपनी स्वार्थ सिद्ध के लिए श्रमिको को भडका कर हडताल लिए प्रेरित करतें है। फलत औद्योगिक अशांति उत्पन्न होती है और इस प्रकार राष्ट्रीय उत्पन्न होती है। और इस प्रकार राष्ट्रीय उत्पादन को भी क्षति उनके बीच की दूरी अधिक हो जाती है।

6. साम्यवाद को बढावा – श्रमिक संघ से साम्यवाद को पर्याप्त बढावा मिलता है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण हमे रूस से प्राप्त होता है। भारतीय श्रम संघ आंदोलन की समस्याएं कठिनाइयां व दोष यद्यपि हमारे देश में द्वितीय महायुद्व स अब तक श्रम संघ मे काफी उन्नति कर ली है। फिर इसके विकास के मार्ग मे कुछ बाधाएं है। जो निम्न है।

1. नियोक्ताओं का विरोध – श्रम संघो के विकास में नियोक्ता बाधक होतें है। क्योकि श्रम संघो के सदस्य श्रमिको को तरह तरह से परेशान करतें है एवं उनकी प्रगति में बाधा उत्पन्न करतें है। फलस्वरूप श्रमिको को इन परेशानियों से बचाने के लिए श्रमिक श्रम संघो नियोक्ता और शासन इन चारो को ही प्रयत्न करना होगा

2. रचनात्मक कार्यो का अभाव – भारत कार्य में ही व्यस्त रहतें है। रचनात्मक कल्याण सम्बन्धी कार्यो जैसे शिक्षा चिकित्सा व मनोरंजन आदि की ओर उनका ध्यान अभी तक नही गया है। जिसके अभाव में श्रमिक संघ श्रमिको को अपनी ओर आकर्षित करने में असफल रहें 3. धीमा औद्योगिक विकास – श्रमिक संघो की प्रगति में सबसे बड़ी बाधा यहाँ का धीमा औधोगिक विकास है। यह कहने की आवश्यकता नही प्रतीत होती है। कि इंग्लैण्ड आदि उन्नतिशील देशो की अपेक्षा हमारे देश में औद्योगिक उन्नति बहुत धीमी रही हे। औद्योगिक विकास के साथ संघो का विकास भी जुड़ा रहता है। यही कारण है कि हमारे देश में श्रम संघो का उदय व विकास इंग्लैण्ड में अमेरिका आदि देश से बहुत दिनो पश्चात हुआ है। एक तो देश का प्रमुख उद्योग कृषि है। तथा दूसरा देश की राजनैतिक पराधीनता में अधिकांश श्रमिक संघ केवल संघर्षत्मिक

4. छोटे छोटे दुर्बल संघ – भारत मे श्रमिक संघो का आकार बहुत छोटा है। तथा उनके पास साधनो का नितान्त अभाव होता है अतः वे नियोजको को प्रभावित्त करने में असमर्थ होते है।

5. स्थायी श्रमिक वर्ग का अभाव – भारतीय कारखानो मे काम करने वाले श्रमिक प्राय गांव से बेरोजगारी के समय शहर मे आ जाते है। जब फसल का समय आता है। तो वे गाँव वापस चले जाते है जिसके कारण वे श्रमिक संघो वे श्रमिक संघो के कार्य मे स्थायी रूप से उत्साह नही लेतें उनका तन कारखाने मे एवं मन गॉव मे रहता है।

6. भर्ती की दोषपूर्ण प्रणाली– औद्योगिक श्रमिकों की भर्ती महयस्थो के द्वारा की जाती है ये महयस्थ क्रांतिकारी विचारो वाले श्रमिको की भर्ती की नही करतें ये लोग श्रमिक संघवाद कोविरोधी होतें है।

7. धन की कमी– भारतीय श्रमिको की मजदूरी कम होने के कारण अनेक इसके सदस्य नही और जो होते है। वे नियमित रूप से चंदा नही दे पातें है। दूसरे चंदा वसूल करने मे नियोक्ता किसी प्रकार का सहयोग नही देतें इसके कारण श्रम संघो के पास अपना कार्य चालने के लिए आर्थिक साधनो की कमी रहती है और उनका विकास नही होने पाता

8. नियोक्ता द्वारा भष्टाचार– नियोक्ता श्रम संघ के पदाधिकारियो को रिश्वत देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयत्न करतें है। इसके लिए वे इसके लिए वे श्रमिक नेताओ को अनेक लालच देतें है श्रम संघ अधिक शक्तिशाली नही हो पाता

9. शिक्षा का अभाव– भारतीय श्रमिक विशेषतः अशिक्षित एवं अज्ञानी होने के कारण श्रम संघो एक सामूहिक समझौतें का महत्व नही समझातें व उनका उचित प्रयोग करने मे असमर्थ रहतें है तथा श्रम संगठन कैसे किया जायें इसके चाहिए आदि बहुत सी बातो को समझाने व करने में भी असमर्थ रहतें है।

10. कानून का अभाव – भारतीय श्रम संघो की धीमी प्रगति का एक महत्वपूर्ण कारण सरकार की ओर से उदासीनता रही है। श्रम संगठन के विकास तथा उनको शाक्तिशाली बनाने हेतु भारतीय सरकार ने कानून कोई विशेष कदम नहीं उठाए है। इंग्लैण्ड में प्रथम संघ 1857 में बनाया जा चुका था जबकि भारत में प्रथम ट्रेड यूनियन एक्ट1928 में पास हुआ था

11. काम का समय अधिक होना– श्रमिको का जीवन आज भी अधिकार ऐसा है। कि अपने काम के सिवाय उन्हें अन्य बातो को सोचने का अवकाश ही नही मिलता इससे न तो वे श्रम के महत्व एवं उनके कार्यो को समझ पाने है और न ही उनकी मदद करतें है।

12. श्रम का विस्तृत क्षेत्र– देश के श्रमिक एक बड़े क्षेत्र में फैले हुए है। और कुछ दशाओं तक पहुँचना भी सम्भव नही हो पाता है। उदाहरण स्वरूप असम के चाय उद्यान बहुत कठिन हो जाता है। और उनको सरलता के साथ दबाया जा सकता है। इस प्रकार श्रमिको तथा सूचनाओं का पहुॅचाना भी श्रमिक संघो के मार्ग में बाधात्मक होता है।

13. भाषा धर्म रीति रिवाजो आदि की विभिन्नताः – भारतीय श्रमिक वर्ग विभिन्न प्रकार की धर्मावलम्बी विचार धाराओं रीति रिवाजों और आदतों का मिश्रण है। इसके लिये उनके संगठित होने में बाधा आती है।

14. बेरोजगारी की समस्या– भारतीय श्रम संघ की एक अन्य कमजोरी भारत की बेरोजगारी की समस्या है। श्रमिक को सदैव इस बात का डर रहता है। कि यदि वे श्रम संघो में क्रियात्मक ढंग से भाग लेतें है। तों वे निकाल दिये जायेगे इसके साथ ही नियोक्ताओं को श्रमिकों को काम से निकालने में कोई विशेष चिंता नही रहती है। क्योकि श्रम पूर्ति की अधिकतम के कारण उन्हें सरलतापूर्वक मनचाहें श्रमिक मिल जातें है।

15. श्रमिक मे नेतत्व की कमी – भारत में श्रमिक आंदोलन की सबसे बडी ऋटि है। अच्छे नेताओं का अभाव भारतीय श्रमिक के अशिक्षित होने के कारण श्रमिक संघो के नेता ऐसे लोग होतें है। जो न तो श्रम जीवन की समस्याओं की समझतें है और न औद्योगिक आवश्यकताओं को इतना ही नही अनेक नेता उद्देश्य प्राप्त करने के लिए संघो का नेतृत्व करतें है। श्रमिक संघ की बाधाओं को दूर करने के लिए तथा शाक्तिशाली बनाने के लिए श्रमिक नियोक्ता श्रमिक शासन तथा श्रम संघ चारो को ही प्रयत्न करना होगा ।

नियोक्ताः– नियोक्ता को चाहिए कि वे श्रमिको की दशाओं में उन्नति करने का प्रयत्न करे जिससे श्रमिक स्वामी के रूप में कारखाने में रहें वे श्रमिकों के लिए शिक्षा आदि का प्रबंध करे उन्हें चााहि एक वे श्रमिक संघ के महत्व को समझें एवं उन्हें मान्यता दे क्योकि ऐसा करने से औद्योगिक शांति स्थापित हो सकेगी और साथ ही औद्योगिक शांति स्थापित हो सकेगी और साथ ही औद्योगिक उत्पादन बढेगा जिससे उन्हें भी लाभ होगा

श्रमिक यह आवश्यक है कि श्रमिक अपनी अज्ञानता की छोडे और अपने अधिकारी और कर्तव्यो को समझे उन्हे अपनाया छोड देना चाहिए और अन्य के साथ सदभावना रखना चाहिए इस प्रकार की भावनायें यदि उनमे उत्पन्न हो जाता है। तो यह निश्चित है कि राजनीतिक दल बाह्य होकर अनका नेतृत्व छोड देगे श्रमिको को संघो का नेतृत्व ग्रहण करना चाहिए

शासन – शासन को चाहिए कि वह श्रमिको के लिए पर्याप्त संख्या में भवन बनवायें जिससे कि श्रमिक स्थायी रूप से औद्योकिग केंन्द्र में रह सके श्रमिको को नेतृत्व करने की शिक्षा दे तथा अपनी श्रम नीति ऐसी रखे जिससे श्रमिक एवं श्रम संघो का विकास हो

श्रम संघ – तभी तक भारतीय श्रम संघ का उद्देश्य केवल हडताले करना और उनके संगठन बनायें रखने तक ही सीमित रहा है। उन्होने श्रमिको की शारीरीक मानसिक और आर्थिक उन्नति की ओर ध्यान नही दिया है। अतः आवश्यक है कि श्रम सघं श्रमिको में शिक्षा प्रचार करे ताकि वे अपने कर्तव्यो का पालन ठीक प्रकार से कर सके तथा उनको ज्ञात हो जाय कि मजदूर संघ का सदस्य होने से उनको क्या लाभ होगा उन्हें श्रम कल्याण करनी चाहिए आज तो श्रम संघ की पाँच केन्द्रीय संस्थायें है। वे अपनी शक्ति को साधारणतः एक दूसरे से लडने तथा एक दूसरे की समस्या छीनने पर ही व्यय करती है। श्रम कल्याण कार्य बहुत ही कम किया जाता है। कुछ सामान्य सिद्वांतो पर भी केन्द्रीय संघ मिलकर काम करें।

Required Readings

- डॉ० आर० एस० कुलश्रेष्ठ – औंद्योगिक अर्थशास्त्र (साहित्य भवन पविलकेशन) झ डॉ० आर० सी० अग्रवाल – मानव संसाधन प्रबंधन (एस०बी०पी०डी० पविलकेशनस हाउस)
- डॉ०पी० आर० एन० सिन्हा एवं इंदूबालाः– श्रम एवं समाज कल्याण (भारतीय भवन पविलकेशन)
- डॉ० आर० के सिंह डॉ अमित कुमार सिंह– मानव संसाधन प्रबंध (आस्था पविलकेशन)
- डॉ0 गोपालकृष्ण अग्रवाल डॉ० मनोज छपडियां – औद्योगिक समाजशास्त्र (साहित्य भवन पविलकेशन)
- डॉ० डी० एस० बधेल – उद्योग और समाज (कैलाश पुस्तक सदन भोपाल) झ डॉ० आर० पी० शर्मा डॉ० अजय सिंह राठौर – औद्योगिक समाजशास्त्र (रिसर्च पविलकेशन्स जयपूर)
- बी0 एन0 बी0 पविलकेशन – श्रम कल्याण तथा विद्यायन

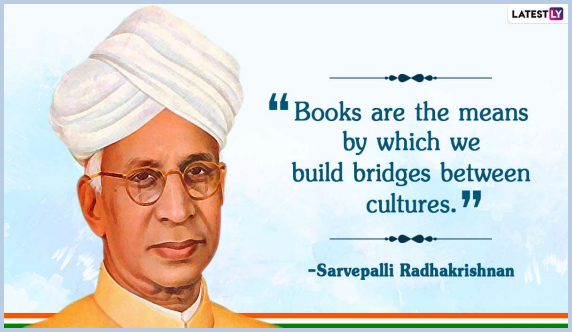

Center for Distance Learning & Continuing Education
MAHATMA GANDHI CHITRAKOOT GRAMODAYA VISHWAVIDYALAYA
Chitrakoot, Satna (M.P.) 485334
E-mail : directordistancemgcgv@gmail.com